चन्दामामा
अगस्त १९८४

पुरस्कार जीतिए

कॅमल

पहला इनाम (१) रु. १५/-
दूसरा इनाम (३) रु. १०/-
तीसरा इनाम (१०) रु. ५/-
१० प्रमाणपत्र

इस प्रतियोगिता में १२ वर्ष की उम्र तक के बच्चे ही भाग ले सकते हैं. ऊपर दिये हुए चित्र में पूरे तौर से कॅमल कलर्स रंग भरिए और उसे निम्नलिखित पते पर भेज दीजिये :

चंदामामा, पो. बॉ. नं. ११५०१, नरिमन पाइंट पोस्ट ऑफ़िस, बम्बई ४०० ०२१.

जजों का निर्णय अंतिम और सभी के लिए मान्य होगा. इस विषय में कोई पत्र-व्यवहार नहीं किया जायेगा.

कृपया कूपन केवल अंग्रेजी में भरिए.

Name: .... Age: ....

Address: ....

....

प्रवेशिकाएं "31.8.1984" से पहले पहले भेजी जायें.

CONTEST NO 37

चन्दामामा

विषय-सूची

अगस्त १९८४

★

★

एक प्रतिः २-००

वार्षिक चन्दाः २४

चन्दामामा

संस्थापकः 'चक्रपाणी' संचालकः नागिरेड्डी

अभी दो वीर-बाँकुड़ों के नाम तुम्हारे दिमाग पर तरोताज़ा होंगे। एक है राकेश शर्मा जो भारत का यूरी गोगरिन बना। दूसरा नाम है— कुमारी बचेन्द्री पाल-जो सर्वोच्च शिखर पर पहली भारतीय महिला थी।

पल-पल खतरों से खेलते हुए दुर्गम ऊँचाइयों पर जाना कितना साहसिक और रोमांचकारी है और कितना कठिन। तुम्हें लगता होगा-काश ! तुम भी उन वीर बाँकुडों में से एक होते !

लेकिन सच तो यह है कि कुछ ऊँचाइयाँ तुम्हारे कदमों के पास हैं और तुम उनसे बेखबर हो। ये हैं— महत्त विचारों की ऊँचाइयाँ, उदात्त भावनाओं के शिखर !

क्या तुम, कक्षा में या बाहर, किसी के छेड़ते ही आपे से बाहर आकर ईंट का जवाब पत्थर से नहीं देते ? तुम्हारा मन दुखी और क्रोधित नहीं हो जाता ? क्या तुम अपनी ऊँचाई को छोड़ कर अपने छेड़ने वाले मित्र से भी अधिक नीचे नहीं उतर आते ? क्रोध को वश में रखना कितना कठिन है ! शायद अन्तरिक्ष और हिमालय की दुर्गम चोटियों से भी अधिक दुर्जेय ! और कठिन कार्य तो सिर्फ़ बाँकुड़े ही कर सकते हैं।

तुम्हारे मन के भीतर भी एक ऊँचा शिखर है— संयम। कोशिश करो कि जब तुम्हें कोई छेड़े तो संयम की लगाम तेरी मजबूत पकड़ में हो।

वर्षः ३६ अगस्त १९८४ अंकः १२

एक प्रतिः २-०० :: वार्षिक चन्दाः २४-००

पशु-पक्षी पालिये—स्वस्थ रहिये !

कुत्ता, बिल्ली, तोता, कबूतर आदि पशु-पक्षियों को पालने से न केवल हम लोगों का समय आनन्द से कट जाता है, बल्कि हृदय तथा रक्त संचार के कई रोगों से बचा भी जा सकता है ।

हाल में ही स्वेडेन के गोथेन बर्ग में 'मानव और पशु के बीच सम्बन्ध' के विशेषज्ञों का एक सम्मेलन हुआ था । उसी में एक शोध कर्त्ता ने यह तथ्य प्रकट करते हुए कहा है कि मनुष्य के स्वास्थ्य पर घरेलू पशु-पक्षियों का बड़ा हितकारी प्रभाव पड़ता है ।

भूकम्पों की पूर्व सूचना अब जानवर देंगे !

पशुओं के आचरण के अध्ययन से हम भूकम्पों का पूर्वानुमान कर सकते हैं । यह बात भारत के भूकम्प विज्ञान के निदेशक श्री एच॰ एन॰ श्रीवास्तव ने अपनी पुस्तक 'भूकम्प का पूर्वानुमान'' में प्रकट की है ।

एक उदाहरण देते हुए उन्होंने कहा है कि जापान के नागोया शहर के जलपान गृहों में हर रोज़ बहुत चूहे नज़र आते थे । किन्तु १८९१ में नोबी में हुए भूकम्प की पूर्व संध्या में वे अचानक अदृश्य हो गये ।

एक अन्य उदाहरण में उन्होंने कहा है कि चीन के तियेनसिन नामक क्षेत्र में १८ जुलाई १९६९ को हुए भूकम्प के कुछ घण्टे पूर्व चूज़े अपने बाड़ों में जाने से डरने लगे, बाघ बौखला उठे, याक ने खाने से इनकार कर दिया तथा घोड़े और भेड़ बेचैन हो इधर-उधर दौड़ने लगे ।

युगोस्लाविया में, १९५५ में हुए भूकम्प के पहले चिड़िया घर के पक्षी शोर मचाने लगे । उत्तरी इटली में १९७६ में हुए भूकम्प के दो घण्टे पूर्व हिरन एक स्थान पर एकत्र हो गये और गाँवों से बिल्लियाँ कहीं अन्यत्र चली गईं ।

क्या आप जानते हैं ?

१. ई॰ सन् ५० में भारत में ईसाई धर्म का सर्व प्रथम प्रचार करने वाले कौन सन्त हैं ?
२. कौन-सा धर्म २४ तीर्थकरों को अपने धार्मिक गुरु मानता है ?
३. बिहार में ई॰ सन् ४२५ से लेकर सन् १२०५ तक कौन सा विख्यात विश्व विद्यालय क़ायम रहा ?
४. पारसियों के पवित्र ग्रन्थ का नाम क्या है ?
५. ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी में रोम के प्रसिद्ध वक्ता कौन थे ?

यथा राजा तथा प्रजा

एक बार विजयगढ़ राज्य में बहुत अव्यवस्था फैल गई। प्रजा खुले आम राजा और कानून का अनादर करने लगी। राजा वीरभद्र ने कानून और व्यवस्था लाने की लाख कोशिश की, किन्तु बेकार! उन्होंने इसका कारण भी जानने का प्रयास किया लेकिन कुछ पता न चला।

विजयगढ़ का पड़ोसी राज्य प्रतापगढ़ सुन्दर राज्य-व्यवस्था के लिए विख्यात था। राज्य भर में अमन-चैन था और प्रजा बहुत सुखी थी। अपने राजा और उसके कानून के लिए प्रजा के हृदय में आदर-भाव कूट-कूट कर भरा था! इसलिए राजा वीरभद्र ने स्वयं प्रतापगढ़ जाकर वहाँ की व्यवस्था देखने का निर्णय किया।

प्रतापगढ़ के राजा धीरसेन ने वीरभद्र का हार्दिक स्वागत किया और उसके आगमन का कारण जान कर कहा— "किसी भी राज्य की उन्नति और व्यवस्था वहाँ की प्रजा पर निर्भर करती है। यदि मेरे राज्य में सुख और व्यवस्था है तो यह हमारी प्रज़ा के ही कारण है।"

यह सुन कर वीरभद्र को इस बात पर सन्तोष हुआ कि उसके राज्य की निरंकुशता का कारण उसकी कमजोरी नहीं, बल्कि उसकी प्रजा है। धीरसेन के मुख से उसकी प्रजा की प्रशंसा सुन कर वीरभद्र के मन में उससे मिलने की इच्छा हुई। उसने धीरसेन से अपनी बात बताई। धीरसेन ने कहा— "हम दोनों ही गुप्त रूप से राज्य का देशाटन करेंगे और इसी दौरान आप हमारी प्रजा से भी मिल लेंगे।"

अगले दिन ही दोनों राजा वेश बदल कर प्रतापगढ़ राज्य में घूमने निकल पड़े। उन दोनों ने कई स्थानों का भ्रमण किया। हर स्थान पर धीरसेन का भारी स्वागत-सत्कार किया गया। यह देख कर वीरभद्र को बहुत आश्चर्य हुआ कि छद्मवेश में रहने पर भी धीरसेन को हर जगह उसकी प्रजा ने पहचान लिया और अपने राजा के प्रति बहुत भक्ति-भाव दिखाया। उन्होंने एक

स्थान पर एक व्यक्ति से इसका कारण पूछा ।

"अपने राजा के लिए हमारे मन में अपार श्रद्धा-भक्ति है । इसलिए हम लोग उन्हें किसी भी वेश में पहचान सकते हैं ।" उस व्यक्ति ने कहा ।

इस भ्रमण के दौरान राजा धीरसेन ने कुछ मन पसन्द चीज़ें ख़रीदीं । किन्तु व्यापारियों ने उन चीज़ों का मूल्य नहीं लिया । बल्कि वे बोले— "आप इन्हें हमारी ओर से भेंट के रूप में स्वीकार करें। राजा और प्रजा के बीच व्यापार नहीं होना चाहिये ।"

भ्रमण से वापस आकर वीरभद्र ने धीरसेन से कहा— "आप की प्रजा सचमुच महान है। हमारी प्रजा को आप की प्रजा से बहुत कुछ सीखना है ।"

इसके बाद वीरभद्र अपने राज्य में लौट आये ।

एक महीने के बाद वीरभद्र भी वेश बदल कर अपने राज्य में घूमने निकल पड़ा। उसे यह देख कर बहुत दुख हुआ कि उसे किसी जगह भी प्रजा ने नहीं पहचाना। एक जगह पर राजा ने किसी वस्तु का मूल्य पूछा। राजा को लगा कि व्यापारी उससे अधिक मूल्य माँग रहा है। इसलिए उसने व्यापारी से कहा— "यदि यहाँ का राजा तुमसे यह वस्तु खरीदना चाहे तो भी क्या तुम यही मूल्य मांगोगे ?"

"यदि राजा यह वस्तु मुझसे खरीदे तो यही मूल्य क्यों, और अधिक दाम लूँगा ।" व्यापारी ने राजा के आदर का कोई ख्याल किये बिना बड़ी लापरवाही से उत्तर दिया ।

वीरभद्र को अपनी प्रजा के इस व्यवहार से बहुत धक्का लगा। अपने महल में लौट कर मंत्रियों को अपनी प्रजा के बारे में बताते हुए उसने कहा— "यह मेरा दुर्भाग्य है कि मैं ऐसी प्रजा का राजा हूँ। प्रतापगढ़ की प्रजा के कारण ही वहाँ का राज्य इतना व्यवस्थित और हर प्रकार से सुखी-सम्पन्न है। अपनी प्रजा को वहाँ की प्रजा के समान बनाने के लिए हमें क्या करना चाहिये, इस पर विचार करके अपने सुझाव दीजिये ।"

मंत्रियों ने थोड़ी देर तक आपस में सलाह करने के बाद राजा से कहा— "महाराज !

आप एक राजा के रूप में तो पड़ोसी राज्य की व्यवस्था तथा वहाँ की प्रजा को भी देख आये, लेकिन हमारी प्रजा को वहाँ के बारे में कुछ भी ज्ञात नहीं है। यदि आप अपनी प्रजा को वहाँ की प्रजा के समान बनाना चाहते हैं तो अपनी प्रजा के कुछ चुने हुए प्रतिनिधियों को वहाँ भेजना चाहिये।"

वीरभद्र को मंत्रियों की यह सलाह बहुत पसन्द आई। राज्य भर की प्रजा में से सौ प्रतिनिधि चुने गये। उन्हें प्रतापगढ़ राज्य में भ्रमण करके वहाँ की प्रजा से मिलने तथा उनकी राज्य-व्यवस्था देखने के लिए भेज दिया गया। इसके लिए वहाँ के राजा धीरसेन की स्वीकृति ले ली गई।

दो महीनों के बाद उन प्रतिनिधियों ने अपना अनुभव सुनाते हुए राजा से कहा—

"महाराज! किसी भी राज्य के समुचित विकास और सुन्दर राज्य व्यवस्था के लिए योग्य और समर्थ नेता का होना आवश्यक है। प्रतापगढ़ के राजा धीरसेन बड़े ही योग्य और समर्थ नेता हैं।"

यह सुनते ही वीरभद्र क्रोधित होकर बोला— "राजा धीरसेन ने स्वयं मुझसे कहा है कि उनके राज्य की समृद्धि और कानून-व्यवस्था का श्रेय वहाँ की प्रजा को है, इसमें उनका कोई बड़प्पन नहीं, लेकिन तुम लोग कहते हो कि यह सब उनकी योग्यता के ही कारण है। यह कैसे हो सकता है?"

"राजा धीरसेन बड़े ही विनम्र हैं, इसलिए किसी सफलता का श्रेय स्वयं नहीं लेते। वे प्रजा को सन्तान के समान प्यार करते हैं और उसके लिए अपना सब कुछ त्याग सकते हैं। इसीलिए नम्रता वश राज्य की सुव्यवस्था के लिए भी अपनी प्रजा की ही प्रशंसा करते हैं, बल्कि अपनी नहीं।" प्रजा के प्रतिनिधियों ने समझाया।

वीरभद्र ने अपनी शंका बताते हुए कहा— "प्रतापगढ़ की प्रजा अपने राजा को छद्म वेश में भी पहचान लेती है, लेकिन हमारी प्रजा अपने राजा को वास्तविक रूप में भी नहीं पहचान पाती। इसका क्या कारण है?"

"महाराज! धूल और कीचड़ में भी सने सोने को पहचान कर लोग उठा लेते हैं। इसमें

पहचानने और उठाने वाले का बड़प्पन नहीं है, बल्कि सोने का है ।" प्रतिनिधियों ने विनयपूर्वक निवेदन किया ।

राजा वीरभद्र को उनकी बातों में कुछ सच्चाई दिखाई पड़ी । इसलिए उन्होंने अपनी बात को स्पष्ट रूप से रखने के लिए कहा ।

"राजा धीरसेन सोते-जागते सदा अपनी प्रजा के कल्याण के बारे में सोचते रहते हैं । वे अपनी प्रजा की हर समस्या को ध्यान से सुनते हैं और उसका समाधान करते हैं । वे प्रायः अपने राज्य का दौरा करते हैं और प्रजा से खुले आम मिल कर उसका सुख-दुख पूछते हैं । अपने राजसी भोग-विलास को नहीं बल्कि प्रजा की सेवा को ही अपने जीवन का उद्देश्य मानते हैं । वे आराम और सुविधा के लिए नहीं, बल्कि प्रजा के ही कल्याणकारी कार्यों के लिए कर लगाते हैं । प्रजा को उन पर इतना विश्वास है कि वह आँख मूँद कर उनकी बात मान लेती है और राजा को भी प्रजा पर इतना भरोसा है कि किसी प्रकार के प्रतिबन्ध की आवश्यकता नहीं होती । जैसा नेक वहाँ का राजा है, वैसी ही वहाँ की प्रजा भी है । यथा राजा तथा प्रजा ।" प्रतिनिधियों ने अपनी बात को स्पष्ट करते हुए कहा ।

प्रतिनिधियों की बातों से राजा वीरभद्र की आँखें खुल गईं । उनमें विवेक जाग्रत हो गया । उन्होंने यह अनुभव किया कि यदि अपनी प्रजा को प्रतापगढ़ की प्रजा के समान बनाना है तो हमें पहले राजा धीरसेन के समान बनना होगा । उन्होंने यह भी अनुभव किया कि राज्य की कुव्यवस्था और प्रजा की गरीबी का कारण और कोई नहीं, बल्कि वह स्वयं है, इसमें प्रजा का कोई दोष नहीं ।

उन्होंने तुरंत मंत्रियों को बुला कर उन्हें चेतावनी देते हुए कहा— "यदि राज्य में सुख और सुव्यवस्था नहीं है तो हम सब को राज्य करने का कोई अधिकार नहीं है ।"

इस निर्णय के कुछ ही दिनों के बाद विजयगढ़ की प्रजा भी सुखी और राजभक्त हो गई ।

१५

[दोनों जहाज़ टकरा कर समुद्र में डूब गये। पिंगल लकड़ी के एक तख़्ते के सहारे तैर कर एक रेगिस्तान में पहुँचा। वहाँ उसकी भेंट हसन गोरी से हुई। वे दोनों मिल कर रेगिस्तानी डाकुओं को पकड़ने के लिए 'इफ़्री क़िला' की ओर चल पड़े। इसके बाद....]

हसन गोरी ने हाथ हिलाकर एक दिशा की ओर संकेत किया। पिंगल ने उस ओर अपनी दृष्टि घुमाई। कुछ ही दूरी पर एक पुराना क़िला शान से खड़ा दिखाई पड़ा।

क़िले के पास ही एक पहाड़ी थी। उस पर एक झरना बह रहा था। झरने के दोनों ओर ऊँचे खजूरों की कतारें झूम रही थीं। क़िले के चारों ओर सन्नाटा छाया हुआ था। मुख्य द्वार अथवा बुर्ज पर मनुष्य का चिह्न तक न था।

"इफ़्री क़िला यही है न ?" पिंगल ने क़िले की ओर अपना हाथ उठाकर इशारा करते हुए हसन गोरी से पूछा।

"हाँ, हाँ, यही है। देखो, क़िले के पास से दूर पहाड़ियों तक जानेवाला एक पथ दिखाई दे रहा है। यह तेहरान से कैरो जाने वाला राज मार्ग है। रास्ते में पड़ने वाला यह क़िला सार्थवाहों के लिए एक पड़ाव का काम करता है। रेगिस्तानी डाकुओं से व्यापारियों को

बचाने के लिए ही यह क़िला बनवाया गया है ! इस क़िले की रक्षा के लिए दो सौ सैनिक यहाँ रखे गये हैं । वे क़िले की देखभाल के साथ-साथ यहाँ पड़ाव डालनेवाले व्यापारियों की रक्षा भी करते हैं। लेकिन आश्चर्य की बात है कि यहाँ तो चारों ओर सुनसान लग रहा है । क़िले के बाहर या प्राचीर पर एक भी सैनिक दिखाई नहीं दे रहा है ।"

तब तक वे क़िले के और निकट आ चुके थे ।

"शायद रेगिस्तानी डाकुओं के सरदार भैरवनाथ ने क़िले पर हमला करके सभी सैनीकों का संहार कर दिया हो। क़िले के अन्दर जाने से ही हमें ठीक-ठीक समाचार मिल सकता है ।" पिंगल ने अपना सन्देह प्रकट किया ।

"हो सकता है, तुम्हारी बात ठीक हो । लेकिन डाकुओं का भी कोई आदमी क़िले के आस-पास नहीं है ।" हसन गोरी ने अपने ऊँट की लगाम रोक ली और क़िले के आस-पास तथा प्राचीरों पर बड़ी सावधानी से अपनी निगाह दौड़ाई ।

पिंगल ने अपने ऊँट को आगे बढ़ाते हुए कहा— "यहीं खड़े होकर सच्ची घटना की कल्पना नहीं कर सकते हसन भाई। क़िले के फाटक तक पहुँचने पर हम लोग कुछ अनुमान कर सकते हैं। यदि फाटक पर डाकुओं के साथ सैनिकों का युद्ध हुआ होगा तो उसके कुछ निशान तो जरूर होंगे ।"

अपने ऊँट को आगे बढ़ाते हुए हसन ने पिंगल के साथ कर लिया ।

"तुम्हारा अनुमान सच लगता है। मुख्य द्वार पर निस्सन्देह बहुत भयंकर युद्ध हुआ होगा । बिना युद्ध के हमारे सैनिकों ने डाकुओं को क़िले के अन्दर कभी घुसने नहीं दिया होगा । लेकिन यह बात निश्चित है कि हमारे सभी सैनिकों को मारने के लिए सैकड़ों की तायदाद में डाकू आये होंगे ।"

धीरे-धीरे पिंगल और हसन गोरी मुख्य द्वार के बहुत निकट आ गये ।

मुख्य द्वार बिल्कुल बन्द था और उसके दोनों कपाट ऐसे लगे हुए थे मानो उन्हें किसी ने

अन्दर से बन्द कर दिया हो। आस-पास का वातावरण बिल्कुल शान्त और निर्जन था। लगता था वर्षों से वहाँ मनुष्य का वास नहीं है— युद्ध, मार-काट या संहार का तो लेशमात्र देख कर हसन गोरी पहले तो खिलखिला कर हँस पड़ा।

फिर ऊँट पर से छलांग लगा कर नीचे कूदते हुए बोला— "पिंगल! तुम भी बेवजह डर रहे थे। चाहे मरुदस्यु भैरवनाथ कितना भी बहादुर और चालाक क्यों न हो, हमारे सैनिकों के साथ युद्ध करना उसके बस का नहीं। लेकिन हमारे सैनिकों का भी कहीं पता नहीं है— इसका एक कारण और सम्भव हो सकता है!

यह कह कर हसन मन्द मन्द मुस्कुराने लगा। पिंगल ने प्रश्न भरी दृष्टि से हसन की ओर देखा।

पिंगल भी अपने ऊँट से उतर चुका था। दोनों मुख्य फाटक के बहुत क़रीब आ गये। हसन ने पिंगल के कन्धे पर हाथ रख कर कहा— "पिंगल, हो सकता है हमारे सैनिक छक कर शराब पीकर नशे में क़िले के अन्दर सो रहे हों!"

पिंगल को इस पर विश्वास नहीं हुआ। उसने सन्देह प्रकट करते हुए कहा— "यदि यह बात सच है तो किसने आप के सैनिक को मार कर गिद्धों को खाने के लिए पहाड़ी पर बाँध दिया था? आखिर वह भी तो इसी क़िले का एक सैनिक था!"

"हो सकता है वह सैनिक नशे में आकर क़िले के बाहर किसी खजूर के नीचे लेट गया हो। तभी भैरव के आदमियों ने उसे घेर लिया हो।"

हसन का यह तर्क सुन कर पिंगल पल भर मौन रहा। किसी निर्णय पर पहुँचने के पहले वह स्थिति को अच्छी तरह समझ लेना चाहता था और मुख्य द्वार की जाँच-पड़ताल कर लेना चाहता था। इसलिए वह चुपचाप बड़ी सावधानी से द्वार के पास गया। किवाड़ों की कुण्डी अन्दर से बन्द है, यह सोच कर उसने पूरी ताक़त लगा कर उन्हें पीछे की ओर धकेल दिया।

धड़ाम! धड़ाम! एक भारी विस्फोट से

पिंगल चौंक कर तुरन्त पीछे हट गया। उसके मुख से एक भयंकर चीख निकल गई। किवाड़ विस्फोट से उड़ कर तितर-बितर हो गये और किवाड़ों से लगी क़िले की दीवार भी ध्वस्त हो गई ।

पिंगल को यह समझने में देर नहीं लगी कि किवाड़ों में अन्दर से कुण्डी नहीं लगी थी और उनके पीछे बारूद रखी हुई थी। इसीलिए हाथ लगते ही किवाड़ पीछे हट गये थे और बारूद से टकराते ही विस्फोट हो गया था ।

विस्फोट से सभी लोग घबरा गये। किवाड़ों तथा दीवार के टुकड़ों से कई लोग घायल होकर कराहने लगे। कुछ ऊँट चौंक कर और कुछ घायल होकर इधर-उधर भाग गये। इस भगदड़ में कुछ ऊँटों के सवार नीचे गिर पड़े और घायल हो गये। विस्फोट के कारण सारा वातावरण धुएं से भर गया था और क़िसी को कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। चारों ओर धुंध सा फैल गया था ।

धुआँ बिखर जाने के बाद पिंगल वहाँ का दृश्य देख कर काँप उठा। विस्फोट के साथ उठी लपटों में कुछ लोग झुलस गये थे, कुछ भगदड़ में ऊँटों से कुचल गये थे। कुछ सैनिक और ऊँट मर चुके थे तथा कुछ बुरी तरह घायल होकर चीत्कार कर रहे थे। पिंगल की आँखें उन घायल और मृत सैनिकों में हसन गोरी को ढूँढ़ रही थीं ।

हसन गोरी विस्फोट के झोंके से उड़ कर दूर एक खजूर के पेड़ के नीचे गिरा पड़ा था। पिंगल उसे ढूंढता हुआ जैसे ही वहाँ पहुँचा, हसन अपने को सम्हालते हुए उठने का प्रयत्न करने लगा। पिंगल ने उसे अपने हाथों का सहारा देते हुए पूछा— "कहीं गंभीर घाव तो नहीं लगा ?"

"नहीं, क़िस्मत से हम बच गये, वरना आज बेमौत मर जाते। यदि झोंके ने मुझे इतनी दूर फेंक दिया न होता तो सारा किस्सा खत्म हो जाता।" हसन गोरी ने संभल कर उठते हुए कहा ।

"वास्तव में भाग्य ने ही हम दोनों को बचाया है।" मुख्य द्वार की ओर नज़र दौड़ाते हुए पिंगल ने कहा— "उधर देखो। हमारे

आधे से अधिक सैनिक काम आ चुके हैं- जो बचे हैं वे बुरी तरह घायल हो कर हाहाकार कर रहे हैं ।"

"थोड़ी देर शान्त रह कर उसने फिर कहा—"दरवाज़े को छूते ही मुझे किसी षड्यंत्र का सन्देह हुआ था, इसीलिए मैं तेजी से पीछे की ओर लौट पड़ा था । वास्तव में हमें दरवाज़े को ताक़त लगा कर धकेलना नहीं चाहिये था, क्यों कि उसमें अन्दर से कुण्डी नहीं लगी थी । पीछे रखी हुई बारूद में किवाड़ों की टक्कर से ही यह विस्फोट हुआ ।"

हसन गोरी अब भी चोट के कारण दर्द का अनुभव कर रहा था और ठीक से चल नहीं पा रहा था । उसने अपनी पोशाक से रेत झाड़ते हुए कहा— "यह चाल दुष्ट भैरव डाकू की है । हमारे सैनिकों और डाकुओं में युद्ध क़िले के भीतर ही हुआ है । हमारे सैनिकों को मारने के बाद वह दुष्ट बड़ी चालाकी से हम सब का खात्मा करने का उपाय भी कर गया । अब हमें बचे हुए सैनिकों के साथ सबसे पहले डाकू भैरवनाथ की खोज करनी चाहिये । और चाहे जैसे भी हो उसे खत्म कर देना चाहिये ।"

इसके बाद हसन गोरी और पिंगल ने दोनों मिल कर घायल और मृत सिपाहियों को जाकर देखा । कुछ सैनिकों को घायलों की मरहम-पट्टी के लिए लगा दिया गया । तथा बचे हुए सिपाहियों के साथ सावधानी से वे दोनों क़िले के अन्दर घुसे ।

अन्दर का दृश्य बड़ा भयावना था । जहाँ-तहाँ लाशें बिखरी थीं ।

कहीं खून से लथपथ पोशाकें थीं तो कहीं युद्ध के सामान तथा हथियार आदि पड़े थे । वहाँ की इमारतों में आग लगा दी गई थी । इसलिए क़िले का भीतरी भाग खंडहर जैसा लग रहा था ।

"आश्चर्य है, हमारे सभी सैनिक मारे गये । समझ में नहीं आता, यह सब कैसे हुआ होगा । डाकू आखिर सब के सब अन्दर कैसे आ गये । लगता है क़िले के बाहर किसी ने विरोध नहीं किया । हो न हो हमारे आदमियों में से किसी ने उसकी मदद की होगी । नहीं तो हमारे इतने सैनिकों को गाजर-मूली की तरह काट देना

मामूली बात नहीं थी।" हसन ने शंका प्रकट की।

"हो सकता है।" पिंगल ने कहा। "लेकिन अब हमें क्या करना चाहिये ?"

कुछ देर दोनों चुपचाप रह कर क़िले के अन्दर का सर्वनाश देखते रहे।

पिंगल ने सुझाव देते हुए पुनः कहा— "हमें अब एक क्षण भी अपना समय नष्ट नहीं करना चाहिये और शीघ्र ही डाकुओं का पता लगाना चाहिये। लेकिन क्या रेगिस्तान के इतने बड़े विस्तार में उनका पता लगाना सम्भव होगा ?"

"क्यों नहीं ?" इतना कह कर हसन गोरी ने तुरत कुछ सैनिकों को कुछ समझाकर क़िले के बाहर भेज दिया।

वे कई दिशाओं में बँट कर कुछ दूर तक गये और शीघ्र ही वापस आ गये।

उन सैनिकों से बातचीत करने के बाद हसन गोरी ने पिंगल से कहा— "ऊँट के पैरों के ताजे निशानों से यही अनुमान लगता है कि भैरव डाकू का दल यहाँ से लगभग दो-तीन कोस पर सामने की पहाड़ियों में जाकर छिप गया होगा और इस विजय की खुशी में रंग-रेलियाँ मना कर नशे में धुत्त हो सो रहा होगा।"

पिंगल को रेगिस्तान के रहस्यों के बारे में कुछ अनुभव नहीं था। इसलिए हसन गोरी की हर बात में वह हाँ में हाँ मिला रहा था। उसने इस अनुमान को सच मानते हुए सुझाव दिया— "यदि यह सच है तो हमें शीघ्र ही वहाँ पहुँच कर उन पर अचानक धावा बोल देना चाहिये। उन्हें हमारे आने का जरा भी एहसास न होगा। ऐसी हालत में उन पर क़ाबू पाना मुश्किल न होगा।"

पिंगल की सलाह मान कर हसन गोरी ने सभी सैनिकों को तत्काल उन पहाड़ियों की ओर जाने का आदेश दिया। पीछे-पीछे अपने-अपने ऊँट पर पिंगल और हसनगोरी चलने लगे।

एक घण्टे के बाद वे लोग उन पहाड़ियों के पास पहुँच गये। जिस मार्ग से वे आ रहे थे, वह दोनों ओर की पहाड़ियों के बीच की घाटी में जा रहा था।

पिंगल ने रुक कर पहाड़ियों पर एक गहरी नज़र डाली। फिर हसन से कहा— "अब हमें घाटी में सीधे आने की बजाय दोनों पहाड़ियों पर बँट जाना चाहिये। हमें अपने ऊँटों को यहीं छोड़ कर पैदल ही बड़ी होशियारी से उन्हें पहाड़ी कन्दराओं में ढूँढने का प्रयत्न करना चाहिये।"

हसन गोरी ने पिंगल की बात मान ली। वे दोनों आधे-आधे सिपाहियों को लेकर दो दिशाओं में बँट गये। हसन गोरी और पिंगल भैरव डाकू को ढूंढते-ढूंढते ऊँची चट्टानों तक आ गये। फिर भी डाकुओं का कुछ थाह-पता न चला।

अचानक पिंगल को, जहाँ वह खड़ा था, उसके नीचे की ओर कुछ कोलाहल सुनाई पड़ा। उसने अपने सैनिकों को सावधान कर दिया तथा एक ऊँची शिला की ओट में छिप कर नीचे की ओर नज़र दौड़ाई।

वहाँ से कुछ दूरी पर नीचे एक समतल क्षेत्र कुछ चट्टानों और वृक्षों से घिरा हुआ था। वहाँ कुछ लोग बैठे थे और कुछ लोग नाच-गा रहे थे। उनके पहनावों से पिंगल को लगा कि वे रेगिस्तानी डाकू हैं।

जब उसे विश्वास हो गया कि यही भैरव डाकू का दल है, तब उसने हसन गोरी के आदेशानुसार उसे सावधान करने के लिए तुरही बजा दी।

तुरही की आवाज़ होते ही डाकुओं का नाच-गान बन्द हो गया।

"डाकू सावधान हो गये हैं, इसलिए विलम्ब करना खतरे से खाली नहीं है।" यह सोच कर पिंगल ने एक बड़ी शिला उनकी ओर लुढ़का दी। फिर अपने सैनिकों को उसी तरफ बढ़ने का आदेश दिया।

अभी वह शिला उन लोगों तक पहुँच भी नहीं पाई थी कि 'सन्न्' करता हुआ एक तीर उसके कानों के पास से गुज़र गया।

पिंगल चट्टान के पीछे छिपा था, इसलिए बच गया। दूसरे ही क्षण उसने देखा कि डाकुओं का दल भाले व तीरों के साथ उसी की ओर ऊपर तेजी के साथ बढ़ा चला आ रहा है।

वह यह देख कर थोड़ी देर के लिए घबरा गया। लेकिन तभी पहाड़ी के दूसरी ओर से डाकुओं की ओर अनगिनत पत्थर लुढ़क कर आने लगे।

पिंगल यह देख कर बहुत खुश हुआ कि हसन को संकेत मिल गया है। उन पत्थरों के पीछे पीछे हसन के सैनिक भी डाकुओं पर टूट पड़े।

दोनों ओर से सैनिकों को आते देख कर डाकू इधर-उधर भागने लगे। जो डाकू सामने पड़ गये उन्हें हसन के सैनिकों ने भालों से भोंक कर मार दिया।

सूरज रेगिस्तानी टीलों के पीछे छिप चुका था। घाटी धुन्धली होने लगी थी। पिंगल डाकुओं का पीछा करते-करते घाटी के निचले हिस्से में उतर गया था।

वहाँ पर कई बड़ी-बड़ी शिलाओं के एक साथ मिलने से कई गुफाएं-सी बन गई थीं। उन गुफाओं में गहरा अन्धेरा था। भैरव डाकू की खोज में जैसे ही पिंगल उन गुफाओं की ओर बढ़ा कि पहाड़ी के ऊपर से हसन की आवाज़ सुनाई पड़ी—

"पिंगल! आगे न बढ़ो। अन्धकार गहरा होता जा रहा है। अन्धेरे में उनका पीछा करना खतरे से खाली नहीं है। आज रात यहीं पड़ाव डालेंगे। कल सुबह उन्हें ढूँढ़-ढूँढ़ कर उनका सफाया कर देंगे।"

हसन यह कहता हुआ उसी की ओर बढ़ता आ रहा था।

पिंगल हसन की बात मान कर वहीं एक शिला पर बैठ गया।

तभी जानी पहचानी आवाज़ में यह सुन कर पिंगल चौंक पड़ा— "कौन है यह पिंगल? क्या यह वही पिंगल है— अवन्ती नगर का मछुआरा?"

"यह तो पद्मपाद की आवाज़ है!" आश्चर्य से उसने चारों ओर नज़र दौड़ाई। एक ओर से एक विशाल शिला की ओट से निकल कर एक व्यक्ति मुस्कुराता हुआ पिंगल की ओर आ रहा था।

(—क्रमशः)

भिखारी का भाग्य

वह भयंकर तूफानी रात थी। चारों ओर घोर अन्धकार छाया हुआ था। बादलों के गर्जन और तूफान की सनसनाहट से श्मशान का वातावरण और भी भयानक हो गया था। प्रचण्ड हवा के झोंकों से चिड़ के वृक्ष शराब में धुत्त पिशाचों की तरह झूम रहे थे। फिर भी दृढ़-संकल्प विक्रम की हिम्मत नहीं टूटी।

वह उस वृक्ष के पास पुनः लौट आया। उसने चुपचाप वृक्ष पर से शव को उतारा और वह श्मशान की ओर चल पड़ा। तभी शव में वास करने वाला बेताल बोला— राजन! आप की साधना और संकल्प सचमुच सराहनीय है। लेकिन आप जिस कार्य के लिए इतना श्रम उठा रहे हैं, क्या वह सिद्ध होगा? जब तक भाग्य में लिखा न हो, तब तक कुछ भी उपलब्ध नहीं होता। प्रारब्ध के अभाव में लगन और परिश्रम सब व्यर्थ हो जाते हैं। इतना ही नहीं, कभी-कभी तो हाथ में आई हुई सफलता भी

बेताल कथा

भाग्य के बिना वापस चली जाती है। इसके उदाहरण के रूप में मैं एक अन्धे भिखारी की कथा सुनाता हूँ। ध्यान से सुनिये। इससे मार्ग की थकावट भी दूर होगी।

किसी गाँव में एक अन्धा भिखारी रहा करता था। उस गाँव की एक गली के छोर पर इमली का एक बहुत बड़ा पेड़ था। उसकी छाया ही उस भिखारी का घर था। वह दिन भर इधर-उधर भीख माँगता और रात को इमली के नीचे विश्राम कर लेता। उसके जीवन की गाड़ी इस प्रकार चली जा रही थी।

एक बार उसके पड़ोसी गाँव में एक मेला लगा। भिखारी उस मेले में भीख माँगने गया। रात को लौटते समय अपने गाँव की नाली में वह गिर पड़ा और चोट से कराहने लगा।

तभी किसी ने आकर उसे अपने हाथ का सहारा दिया। "उठो बाबा! क्या तुमने यह नाली देखी नहीं?"

"मैं अन्धा हूँ बेटे! पड़ोसी गाँव के मेले से भीख माँग कर आ रहा हूँ। क्या तुम इस गली के छोर पर इमली के पेड़ तक पहुँचा दोगे?" यह कहते हुए अन्धे ने उठने की कोशिश की। "लेकिन तुम कौन हो?" उसके कन्धे का सहारा लेते हुए भिखारी ने पूछा। "इस गाँव में आज ही आये लगते हो!"

"आप ठीक कहते हैं। मैं इस गाँव में आज ही आया हूँ। लेकिन आप को यह कैसे पता चला?" अन्धे को लेकर गली में आगे बढ़ते हुए उसने पूछा।

"इस गाँव में मेरी आधी उम्र गुज़र गई। हर आवाज़ पहचानता हूँ। किसी के घर में पहुना आये हो क्या?" भिखारी एक हाथ में अपनी लाठी लिये था और दूसरे हाथ में उसका कन्धा। वह अब भी थोड़ा लंगड़ा रहा था।

"नहीं, बेसहारा और क़िस्मत का मारा हूँ। मजदूरी की तलाश में दिन भर इस गाँव में भटकता रहा। जब कुछ न मिला तो पानी पीकर भूखा ही पास के एक चबूतरे पर लेट गया। तभी धम्म् से किसी के गिरने की आवांज सुन कर आप के पास आ गया।"

"क्या तुम्हारे माता-पिता नहीं हैं?"

"वे बचपन में ही स्वर्ग सिधार गये। मेरे

नाना ने पाल-पोस कर बड़ा किया । लेकिन दुर्भाग्य से, कुछ दिन हुए, वे भी परलोक सिधार गये । जब तक नाना रहे, मैंने उनके दुलार में कोई काम-धन्धा सीखा नहीं । अब मजदूरी के सिवा कर भी क्या सकता हूँ । लेकिन कई दिनों तक भटकने पर भी कुछ काम नहीं मिला ।"

"इमली का पेड़ आ गया बाबा ? अब दर्द कैसा है ?" यह कह कर वह चलने को हुआ ।

"भगवान तुम्हारा भला करे । दर्द अब कुछ कम लग रहा है । अरे हाँ, नाम तो बताया नहीं ? और जाओगे भी कहाँ ?"

"सारथी ।" उसने अपना नाम बताते हुए कहा । "उसी चबूतरे पर जहाँ मैं सो रहा था ।"

भिखारी ने हँसते हुए कहा— "वह चबूतरा तुम्हारा तो नहीं । कोई आकर वहाँ से उठा देगा । चलो, यहीं सो रहो । इस पेड़ के नीचे से तुम्हें कोई नहीं उठायेगा ।" इस भिखारी की आवाज़ में लगा उसका नाना बुला रहा हो ।

उस दिन से इमली का वह पेड़ सारथी का भी घर बन गया ।

उस दिन से सारथी प्रति दिन भिखारी को ले जाकर किसी मन्दिर या चौक के पास बिठा देता । भिक्षा में जो भी पैसे मिल जाते, दोनों उसी में पेट भर लेते । और रात को आकर इमली के पेड़ के नीचे सो जाते ।

एक दिन कड़ी दुपहरी में मन्दिर की सीढ़ियों पर बैठा-बैठा थक कर भिखारी सो गया । तभी मूल्यवान वस्त्र में एक प्रौढ़ व्यक्ति भिखारी के

पास आया और उसके भिक्षा पात्र में एक छोटी-सी थैली डाल कर चला गया ।

थैली में शायद कुछ खाने की वस्तु हो । यह सोच कर सारथी ने थैली चट खोल दी ।

"अरे, यह क्या ?" आश्चर्य से उसकी आँखें फटी की फटी रह गईं । उसमें सोने के कई सिक्के थे ।

सेठ ने शायद गलती से वह थैली यहाँ छोड़ दी । यह सोच कर सारथी ने उस थैली को सेठ की ओर बढ़ाते हुए कहा— "इसमें तो सोने के सिक्के हैं ।"

सेठ मुस्कुराया । "तुम भिखारी के पोते हो ! यह तो अच्छा है । अब तुम दोनों को भीख माँगने की जरूरत नहीं पड़ेगी ।"

लेकिन सारथी अब भी फटी आँखों से सेठ की ओर निहार रहा था मानों पूछ रहा हो— क्या भीख में सोने के इतने सिक्के दिये जाते हैं ?

"कभी-कभी मेरे व्यापार में आशा से अधिक लाभ हो जाता है। तब मन्दिर के देवता के सामने केवल कुछ नारियल फोड़ने से मुझे सन्तोष नहीं होता। इसलिए अपने लाभ का सौवां हिस्सा किसी गरीब को दान कर देता हूँ। यदि गरीब का जीवन सुधर जाये तो उसका पुण्य तो मुझे ही मिलेगा न ?" इतना कह कर सेठ वहाँ से चला गया।

सेठ की बात उसके दिमाग में कौंध गई। "सेठ ने इतना दान इसीलिए तो किया कि किसी गरीब का जीवन सुधर जाये। क्यों नहीं वह अपना जीवन इससे सुधार ले।" जब वह थैली लेकर वापस आ रहा था तो उसके मन में यही उथल-पुथल हो रहा था।

अचानक उसके कदम शहर की ओर मुड़ गये। उसने शहर में बड़े पैमाने पर सब्जी का व्यापार शुरू कर दिया। कुछ ही वर्षों में उसे हजारों का लाभ हुआ। शहर के धनी मानी लोगों में उसकी गिनती होने लगी। एक प्रतिष्ठित व्यापारी ने उसके साथ अपनी बेटी सुलोचना का विवाह भी कर दिया।

सुलोचना काफी समझदार और बुद्धिमती थी। वह अपने पति के सम्बन्ध में इतना ही जानती थी कि एक गाँव से आकर शहर में उन्होंने एकाएक व्यापार शुरू कर दिया। विवाह के तीन-चार वर्षों के बाद एक सब्जी का फेरी वाला उसके घर आया। वह सारथी के गाँव का रहनेवाला था। बातचीत के सिलसिले में उसने सुलोचना को बताया कि चार-पाँच वर्ष पूर्व कैसे सारथी अपने नाना की मृत्यु के बाद बेसहारा हो गया। और अन्त में रोजी-रोटी की तलाश में गाँव छोड़ कर शहर चला आया।

यह सुन कर सुलोचना की उत्सुकता बढ़ गई। वह जानना चाहती थी कि उसके पति ने इतने कम समय में इतना अधिक धन कैसे कमा लिया।

शाम को जैसे ही सारथी घर आया, सुलोचना ने अपनी उत्सुकता प्रकट की।

इस प्रश्न ने उसे जैसे झकझोर दिया। उसे

लगा मानों किसी ने उसे गहरी नींद से जगा दिया हो ।

सारथी का मौन देख सुलोचना को कुछ सन्देह हुआ । उसने वही प्रश्न फिर दुहराया ।

"मैंने यह व्यापार पाप की पूंजी से शुरू किया है ।" सारथी अपनी पत्नी से छिपा न सका और साहस करके सच्ची बात बता दी । "बस ! इससे अधिक न पूछो ।" उसके मन में बड़ी बेचैनी हो रही थी ।

"लेकिन पाप की पूंजी में बरकत नहीं होती । आप का व्यापार तो दिन दूना रात चौगुना फैल रहा है । शायद आपने गहराई से इस पर विचार नहीं किया है ।" सुलोचना के इस उत्तर से सारथी को थोड़ी शान्ति मिली ।

उसने आरम्भ से लेकर अब तक की सारी कहानी सुलोचना को बता दी । फिर कहा— "अभी भिखारी दादा ज़िन्दा होगा । क्यों नहीं उसे अपने घर में रखकर उस पाप का प्रायश्चित कर लें ।"

सुलोचना ने अनुभव किया कि यद्यपि उसके पति ने अधर्म के पैसे से व्यापार शुरू किया है, फिर भी वह बुरा व्यक्ति नहीं है । पति की मार्मिक कथा सुन कर उसकी आँखों में आँसू छलछला आये । आंचल से आँखों को पोंछते हुए उसने कहा— "आपने बहुत देर कर दी । यह आप को बहुत पहले करना चाहिये था । आप कल सवेरे ही रवाना हो जाइये ।"

"लेकिन यदि वह आने से इनकार कर दे तो..." सारथी को सन्देह हुआ ।

"तब मैं भी साथ चल कर उन्हें मनाऊँगी ।

फिर भी अपने साथ उनके लिए थोड़ा धन ले जाइये। यदि न आयें तो यह धन उन्हें भेंट देकर वापस आ जाइये।" सुलोचना ने समझाया।

तड़के उठ कर सारथी ने हाथ-मुँह धोया और एक गिलास शरबत पी भिखारी दादा के गाँव की ओर वह चल पड़ा। उसने साथ में पाँच हजार रुपये रख लिये।

उस गाँव तक पहुँचते-पहुँचते शाम हो गई। वह सीधा इमली के पेड़ के पास पहुँचा। लेकिन भिखारी दादा वहाँ नहीं था और न उसके वहाँ रहने का कोई चिह्न। उसका कलेजा धक् से कर गया। सांस रोक कर एकटक वह उस इमली के पेड़ की जड़ को निहारता रहा।

"क्या देख रहे हो? अन्धा भिखारी आजकल शिवाले के पास रहता है!" एक ग्रामीण ने उसे थोड़ा पहचानते हुए कहा।

सारथी बड़ी तेजी से शिवाले की ओर लपका। तब तक अन्धेरा फैलने लगा था।

"भाई! यहाँ कोई अन्धा भिखारी रहता है?" शिवाले के हाते के पास पहुँच कर उसने एक ग्रामीण से पूछा। वह ग्रामीण शिवाले के मण्डप के बाहर खड़ा बीड़ी पी रहा था। उसने सारथी को एड़ी से चोटी तक ध्यान से देखा मानों आँखों से उसे तौल रहा हो। सारथी के गले में लटकते सोने के हार पर उसकी नज़र टिक गई। फिर जैसे सकपका कर कहा—"क्या कहा? हाँ, एक अन्धा भिखारी तो रहता है। पर अभी आया नहीं है। थोड़ी देर में यहीं हाते में आकर सो जायेगा।"

सारथी शिवाले के हाते के अन्दर जाकर एक कोने में बैठ गया। थका तो था ही, आँख लग गई।

कुछ देर के बाद अचानक सिर पर लाठी के प्रहार से उसकी नींद टूट गई। उसने देखा कि चोर उसकी थैली और गले का जंजीर झटक कर भाग रहा है। अन्धकार के बावजूद उसने उसे पहचान लिया। यह वही व्यक्ति था, जिससे उसने भिखारी के बारे में पूछा था।

सारथी चोट के-दर्द से कराह उठा। उसकी कराह सुन कर भिखारी की नींद टूट गई। सारथी ने उसे पहचान कर अपना परिचय देते हुए कहा— "मैं सारथी हूँ, भिखारी दादा।

मुझे माफ़ कर दो। मैंने पाप किया है।"

सारथी ने उसे भिखारी के यहाँ से जाने से लेकर अब तक की सारी कथा सुना दी और उसे अपने घर चलने का अनुरोध किया।

भिखारी ने पहले अपने चिथड़े से सारथी के घाव पर पट्टी बाँधी। फिर अपने आप ही हँस कर चुप हो गया।

"बोलो भिखारी दादा! मेरे साथ चलोगे न? मेरी पत्नी ने बहुत आग्रह किया है। यदि नहीं चलोगे तो वह स्वयं तुम्हें लेने के लिए आ जायेगी।" मौन को भंग करते हुए सारथी ने भिखारी के कन्धे को झकझोर कर कहा।

तभी भिखारी ने मौन भंग किया। "होनी कितनी बलवान है! भाग्य कितना बड़ा सच है— शायद शिवाले में रहने वाले भगवान से भी बड़ा! जिसके भाग्य में जो बदा नहीं होता उसे भगवान भी नहीं दे सकते। इसलिए शिवाले से-भगवान की नजरों के सामने से-चोर तुम्हारी वह थैली ले गया, जो तुम मेरे लिए लाये थे। और इसके पहले भी सोने के सिक्कों की थैली मिली तो मुझे ही थी। लेकिन वह मेरे भाग्य में नहीं थी। वह तुम्हारी क़िस्मत में थी। इसीलिए तुम लेकर चले गये। और उससे व्यापार चला कर बड़े आदमी बन गये। हर चीज़ मनुष्य अपने भाग्य में लेकर आता है। या यों कहो भाग्य ही मनुष्य को चलाता है। मेरा भाग्य स्पष्ट है— एक लम्बी रात की तरह जहाँ कभी सुबह नहीं होती। इसलिए तुम्हारे साथ मेरे जाने का सवाल ही कहाँ पैदा होता है! सो

जाओ। सुबह होते ही अपने घर लौट जाना।"

और फिर सन्नाटा छा गया। सारथी के पास कहने के लिए कुछ नहीं था। दोनों रात भर वहीं बैठे रहे। भिखारी अपने भाग्य पर सोचता रहा और सारथी के मन को उसका पाप कुतरता रहा।

मुर्गे की बांग से जब सारथी का ध्यान टूटा तो उसके मुँह से फिर ये शब्द निकल पड़े— "दादा, क्या सचमुच नहीं चलोगे?"

भिखारी की गुदड़ी में कुछ हलचल हुई। सारथी को कुछ आशा जगी-शायद दादा साथ चले। तभी भिखारी ने चिथड़े में लिपटी एक छोटी-सी पोटली देते हुए कहा— "इसमें कुछ छुट्टे हैं, रख लो। दूर का सफर है। रास्ते में

भूख लगे तो कुछ लेकर खा लेना।"

भिखारी की ममता से वह दब गया और समझ गया कि दादा कभी नहीं साथ जायेगा।

"मैं तुम्हारे कर्ज़ से दब कर मर गया हूँ।" इतना कह कर आँखों में आसूँ लिये सारथी शहर की ओर चल पड़ा।

बेताल ने कहानी समाप्त कर पूछा—"राजन, भिखारी को जो पहली बार सोने के सिक्कों की थैली मिली-वह सारथी चुपचाप लेकर चला आया। दूसरी बार सारथी जब उसके लिए पाँच हज़ार रुपयों की थैली लाया-तब वह भी चोर ले भागा। ये दोनों घटनाएं निश्चिय ही दुर्भाग्य के कारण हुईं। इनके लिए भाग्य को दोषी ठहराना स्वाभाविक था। लेकिन जब सारथी स्वयं भिखारी को अपने घर ले जाना चाहता था तब वह उसके साथ क्यों नहीं गया। यह तो उसकी अपनी इच्छा पर निर्भर था। उसके लिए भाग्य को दोषी ठहराना क्या अनुचित नहीं है ? इस प्रश्न का उत्तर यदि आप जान कर भी नहीं देंगे तो आप का सिर धड़ से अलग हो जायेगा।"

"यह ठीक है कि सारथी के साथ जाने से उसका दुर्भाग्य सौभाग्य में बदल सकता था, लेकिन उसका विश्वास था कि उसके दुर्भाग्य की छाया उसके साथ जायेगी और सारथी का जीवन भी नष्ट हो जायेगा। उसका यह विश्वास इसलिए हो गया था कि उसके पास जब तक सारथी रहा, भिखारी ही बना रहा। जब दूसरी बार उसके लिए रुपयों की थैली लेकर आया तब न केवल उसकी थैली गायब हो गई बल्कि उसका हार भी चोर ले गया। चोर ने उसे मार कर घायल भी कर दिया।

"वह सारथी को अपने पुत्र की तरह प्यार करता था, इसलिए उसके सुख के लिए जीवन भर भिखारी ही बने रहना उसने बेहतर समझा। इसीलिए अवसर मिलने पर भी वह सारथी के साथ नहीं गया।"

राजा विक्रम का मौन-भंग हो चुका था। इसलिए शव के साथ बेताल पुनः उड़ कर उसी पेड़ पर जा बैठा।

डरपोक ने शत्रु को खदेड़ा

बदरी प्रसाद मालवा के एक गाँव का रहनेवाला था। उसके माता-पिता बचपन में ही स्वर्गवासी हो गये थे, इसलिए उसकी दादी ने उसे पाल-पोस कर बड़ा किया।

देखने में वह एक स्वस्थ युवक था पर था अव्वल दर्जे का डरपोक। वह अपनी छाया को भी देख कर काँप उठता था।

एक दिन संध्या समय उसके घर एक संन्यासी आये। बदरी प्रसाद की दादी साधु संन्यासियों के प्रति बहुत भक्ति-भाव रखती थी। इसलिए उसने संन्यासी का बहुत सेवा-सत्कार किया। जब उसकी दादी संन्यासी को भोजन करा रही थी, तब बदरी प्रसाद कोने में बैठा हुआ संन्यासी की ओर सहमी नज़रों से देख रहा था। उसी समय रसोई घर से एक चूहा निकल कर वहाँ आ गया। चूहे को देखते ही बदरी प्रसाद के पास बैठी हुई बिल्ली 'म्याऊँ-म्याऊँ' करती हुई गली की ओर खिसक गई।

बिल्ली को चूहे पर झपटने की बजाय बाहर जाते देख संन्यासी को आश्चर्य हुआ। तभी दादी ने बदरी प्रसाद से कहा— "बदरी बेटा, चूहों से तंग आकर तुमने बिल्ली को तो पाला, लेकिन यह भी तुम्हारी तरह डरपोक निकली और चूहे को देखते ही खिसक गई। तुम्हारा हाथ लगते ही हर प्राणी दब्बू हो जाता है।"

यह सुन कर संन्यासी की जिज्ञासा बढ़ गई। उन्होंने भोजन के बाद बदरी प्रसाद के हाथ की रेखाओं को ध्यान से देखा तथा मन ही मन बुदबुदा कर कुछ हिसाब-किताब लगाया। फिर दादी को अकेले में समझाते हुए कहा— "तुम्हारे पोते की हस्तरेखा विचित्र है। इसे कायर कह कर बात-बात पर मत फटकारो।"

"महाराज! मैं क्या करूँ! इसका व्यवहार ही ऐसा होता है कि मुझे गुस्सा आ जाता है। इसका डर भगाने का कोई उपाय बता दें तो मैं

गंगाप्रसाद

आजीवन आप का एहसान न भूलूंगी।" दादी ने संन्यासी से गिड़गिड़ा कर कहा।

संन्यासी ने उसे समझाते हुए कहा— "इसकी कायरता किसी दवा-दारू से दूर नहीं होगी। मैंने कहा न कि इसकी रेखाएं अद्भुत और विचित्र हैं। इसकी कायरता के कारण कोई कल्याणकारी महान कार्य होगा।"

इस घटना के कुछ दिनों के बाद एक दिन बदरी प्रसाद अपने गाँव के जमीन्दार की ड्योढ़ी की ओर से गुजर रहा था। तभी उसे ड्योढ़ी पर जमीन्दार का पालतू पिल्ला दिखाई पड़ा। वह पिल्ला देखने में इतना सुन्दर था कि बदरी प्रसाद उसे गोद में उठा कर प्यार करने लगा। जब जमीन्दार की उस पर नज़र पड़ी तो उसने बदरी प्रसाद को डाँट कर वहाँ से भगा दिया।

संयोगवश उसी दिन रात को जमीन्दार के घर कुछ चोर घुस आये। लेकिन आश्चर्य! पिल्ला चोरों पर भौंकने की बजाय उन्हें देख कर छिप गया। जमीन्दार को पिल्ले की यह हरकत बड़ी विचित्र लगी। उसे शक हुआ कि बदरी प्रसाद ने उसे कुछ खिला तो नहीं दिया। उसने यही आरोप लगा कर बदरी प्रसाद पर मुकदमा कर दिया।

न्यायाधीश ने जमीन्दार की बात सुनने के बाद बदरी प्रसाद के हाथ में गीता पकड़ाते हुए यह क़सम खाने को कहा कि वह जो कुछ कहेगा सच कहेगा।

बदरी प्रसाद शपथ लेकर जब न्यायाधीश को गीता लौटा रहा था तो न्यायाधीश के हाथ से इसका हाथ छू गया। बदरी प्रसाद का स्पर्श होते ही न्यायाधीश का स्वभाव बदल गया। उसके अन्दर भी बदरी प्रसाद का डर समा गया। इसके पूर्व वह बहुत निर्भीक माना जाता था और अपराधियों को कठिन से कठिन सजा देने में भी संकोच नहीं करता था। लेकिन बदरी प्रसाद का स्पर्श होने के बाद उन्होंने घबरा कर कहा— "मैं मुद्दई या मुद्दालेह किसी के पक्ष में निर्णय सुनाता हूँ तो दूसरा पक्ष निश्चित रूप से नाराज़ हो जायेगा। इसलिए फैसला सुनाये बिना ही आज की कार्यवाही बरखास्त करता हूँ।" और यह कह कर वह कचहरी से उठ कर चला गया। जमीन्दार यह सब देख कर हैरान था। उसे बदरी प्रसाद के बारे में और भी कई अद्भुत

और दिलचस्प बातें मालूम हुईं ।

जमीन्दार का राज्य के मंत्री सुगुण वर्मा से विशेष परिचय था । इसलिए उसने मंत्री को बदरी प्रसाद का सारा विचित्र वृतान्त बता दिया । मंत्री ने बिल्ली, पिल्ले तथा न्यायाधीश पर उसके स्पर्श का एक ही तरह का प्रभाव देख कर यह निष्कर्ष निकाला कि उसके स्पर्श में एक विशेष प्रकार का प्रभाव है । मंत्री ने कुछ सोच कर जमीन्दार से कहा कि वह बदरी प्रसाद को राजधानी में भेज दे ।

जिस समय बदरी प्रसाद मंत्री से मिलने आया उस समय मंत्री एक दरबारी पहलवान से बातें कर रहा था । मंत्री ने बदरी प्रसाद का पहलवान से परिचय कराया । बदरी प्रसाद ने बड़ी विनय के साथ उस पहलवान को प्रणाम किया और उसके साथ हाथ मिलाया । लो, देखो ! वह दरबार का मशहूर पहलवान जिसने कितने ही पहलवानों को पछाड़ा था, देखते-देखते दुम दबा कर चला गया ।

मंत्री ने सिपाहियों से पकड़वा कर उसे फिर बुलवाया और भाग जाने का कारण पूछा ।

पहलवान ने लज्जित होकर डर से काँपते हुए कहा— "पता नहीं क्यों मुझे अब बहुत डर लगता है । लगता है मुझे अब कोई भी पछाड़ देगा !" इतना कह कर वह फिर खिसक गया ।

इस प्रयोग से मंत्री का यह निष्कर्ष और भी पक्का हो गया कि बदरी प्रसाद के हाथ के स्पर्श में एक विशेष प्रभाव है जो स्पर्श किये हुए व्यक्ति को डरपोक और दब्बू बना देता है ।

मंत्री ने बदरी प्रसाद की ये अचरज की बातें

राजा को सुना दीं। राजा को यह सुन कर क्रोध आ गया। उसने गुस्से में आदेश देते हुए कहा— "यह अवश्य कोई शापग्रस्त होगा। वह अपने शापित स्पर्श से पूरे राज्य को कायर और डरपोक बना दे, इसके पहले ही उसे फाँसी पर चढ़ा दो।"

बदरी प्रसाद की फाँसी की खबर मिलते ही उसकी दादी फूट-फूट कर रोने लगी। वह सुगुण वर्मा के चरणों में गिर पड़ी और गिड़ गिड़ाकर बोली— "यही हमारा एक मात्र सहारा है। इसके प्राण किसी तरह बचा लीजिये। हम अपने बेटे को लेकर राज्य के बाहर चले जायेंगे, लेकिन किसी तरह उसके प्राण की भीख दे दीजिये।"

मंत्री सुगुण वर्मा ने उसकी दादी को समझाते हुए कहा— "तुम निश्चिन्त रहो बुढ़िया। तुम्हारे बेटे को कुछ नहीं होगा। हम उसे फाँसी से बचाने के लिए कुछ न कुछ उपाय करेंगे।"

इसके बाद उन्होंने राजा से निवेदन किया— "महाराज! इसके बारे में शीघ्रता करना ठीक नहीं। क्यों नहीं इसे एक महीने के बाद फाँसी दी जाये, तब तक इसे कड़ी निगरानी में रखा जाये ताकि इसका गलत प्रभाव किसी और पर न पड़े।"

राजा ने मंत्री की सलाह मान ली। मंत्री ने बदरी प्रसाद को सभी सुविधाओं से युक्त एक भवन में ठहराने का प्रबन्ध कर दिया।

अभी एक महीना भी नहीं बीता होगा कि एक समाचार ने राजा को दहला दिया। यह समाचार मालवा की सीमा का एक सैनिक लाया था। पड़ोसी राजा कलिंग नरेश ने भारी सेना के साथ मालवा पर आक्रमण कर दिया था।

मालवा एक छोटा-सा राज्य था और कलिंग के साथ युद्ध करना लोहे के चने चबाना था। इसलिए राजा ने घबरा कर मंत्री को बुलवाया।

"आप को घबराने की कोई आवश्यकता नहीं। मैंने कलिंग नरेश का उपाय कर लिया है। जल्दी ही आप की सेवा में बेहद खुशी की खबर आयेगी।" मंत्री ने राजा को आश्वासन दिया।

कलिंग नरेश के नाम एक पत्र लिख कर बदरी प्रसाद को देते हुए कहा— "तुम्हें यह पत्र सीमा पर शिविर लगाये कलिंग नरेश के हाथ में

देना है ।" राजा के दो सैनिक भी बदरी प्रसाद के साथ कर दिये गये ।

बदरी प्रसाद ने कलिंग नरेश के शिविर में पहुँच कर उन्हें पत्र सौंप दिया । कलिंग नरेश ने समझा कि यह सन्धि-प्रस्ताव होगा, क्यों कि उसे विश्वास था कि मालवा की सेना उसका मुक़ाबला नहीं कर पायेगी और निश्चित ही घुटने टेक देगी । लेकिन आशा के विपरीत उस पत्र में गालियाँ भरी थीं । पत्र पढ़ते ही कलिंग नरेश की त्योरियाँ चढ़ गईं । उन्होंने क्रोध में काँपते हुए हुक्म दिया— "इस घमण्डी का सिर काट लो ।"

यह आदेश सुनते ही बदरी प्रसाद डर से थर-थर काँपने लगा । हाथ जोड़ कर गिड़गिड़ाते हुए उसने कहा— "मुझे नहीं मालूम इस पत्र में क्या है । मैं तो मंत्री के आदेशानुसार यह पत्र आप के पास लाया हूँ ।" इतना कह कर वह कलिंग नरेश के पैरों में गिर पड़ा ।

और फिर मानों चमत्कार हो गया ! चन्द मिनट पहले तक शेर की तरह दहाड़ने वाला कलिंग नरेश भीगी बिल्ली बन गया और डरता हुआ बदरी प्रसाद से कहने लगा—

"हमने इस राज्य पर आक्रमण करके गलती की है । मंत्री से जाकर कह दो कि मैं इसी वक्त अपनी सेना वापस लिये जा रहा हूँ और जो कुछ हुआ, इसके लिए क्षमा चाहता हूँ ।"

और इतना कह कर अपना तम्बू उखाड़ कर कलिंग नरेश अपनी सेना के साथ इस तरह भागे जैसे शेर के भय से गीदड़ भागता है ।

बदरी प्रसाद ने अनजाने में ही अपने राज्य को एक भारी विपत्ति से बचा लिया । लेकिन इसके साथ ही उसकी कायरता तथा दूसरों को कायर बना देने वाला उसका स्पर्श भी खत्म हो गया । मंत्री ने उसे मालवा की सेना में भर्ती कर लिया और उसने अनेक युद्धों में बड़ी बहादुरी दिखाई ।

मालवा के राजा ने मंत्री की सूझ-बूझ की बड़ी प्रशंसा की और इतनी बड़ी विपत्ति को इतनी आसानी से दूर कर देने के लिए उसे विशेष राजसी सम्मान से विभूषित किया ।

बूढ़े पिता-और पत्नी !

बहुत पुराने समय की बात है। एक बार बोधिसत्व ने काशी राज्य के एक गाँव में एक किसान के घर जन्म लिया। उनके माता-पिता ने नाम रखा-कमल। कमल बड़े लाड़-प्यार में पलने लगा।

बचपन से ही उसकी बुद्धि तीक्ष्ण थी। अपनी अवस्था के बालकों से वह अधिक ज्ञानी और विचारवान था। माता-पिता का उस पर बड़ा स्नेह था, लेकिन दादा का तो वह मानों प्राण था।

दादा बहुत ही बूढ़े थे। वे घर का कोई काम नहीं कर सकते थे। उल्टे घर के सभी लोगों को उनकी सेवा-टहल में रहना पड़ता। यह बात कमल की माँ को बहुत अखरती थी।

एक दिन कमल की माँ ने अपने पति से कहा— "मैं तो तुम्हारे पिता की सेवा करते-करते खुद ही स्वर्ग सिधार जाऊँगी। सारा दिन उसी की टहल करते रहो। लगता है घर में और काम ही नहीं है। आखिर यह कब तक चलता रहेगा !"

"जब तक उनकी आयु है, तब तक उनकी सेवा करना हमारा धर्म बनता है। आखिर मौत के पहले किसी का गला घोंट कर तो नहीं मार सकते।" किसान ने थोड़ी तेज आवाज़ में कहा।

"मार डालने में भी क्या बुराई है ? ज़िन्दा रहने में न उसे सुख है न हमें। तिल-तिल कर मरने से तो अच्छा है एक बार मौत आ जाये।" किसान से कहीं अधिक पत्नी की आवाज़ तेज़ थी।

किसान को पहले पत्नी की बात बहुत बुरी लगती थी। उसे लगता था कि पिता को दुख देना महापाप है। लेकिन धीरे-धीरे पत्नी के दबाव में आकर उसकी बातों से वह भी सहमत हो गया। अन्त में वह भी सोचने लगा कि पिता को मार देने में कोई पाप नहीं है, बल्कि वे

(जातक-कथा)

बुढ़ापे की शारीरिक पीड़ा से मुक्त हो जायेंगे। इसके लिए उसने एक योजना भी बना ली।

एक दिन किसान ने अपने पिता से कहा— "बाबूजी ! खेत में एक कुआं खोदवाने के लिए पड़ोसी गाँव के महाजन से कर्ज़ ले रहा हूँ। महाजन कहता है कि दस्तावेज़ पर आप के हस्ताक्षर भी आवश्यक हैं। इसलिए मेरे साथ गाड़ी पर कृपा करके चलिये।"

उसका पिता बेटे की बात सच मान कर उसके साथ चल पड़ा। कमल भी ज़िद करके अपने दादा के पास बैठ गया।

रास्ते में एक छोटा-सा जंगल था। किसान ने जंगल के बीचो बीच गाड़ी रोक दी। वह एक फावड़ा लेकर उतर पड़ा और पिता-पुत्र दोनों से बोला— "तुम दोनों गाड़ी में ही ठहरो। मैं अभी आता हूँ।" इतना कह कर किसान जंगल में एक ओर चला गया।

पिता के जाने के बाद कमल भी एक फावड़ा लेकर उतर पड़ा। "दादा जी ! तुम यहीं रहो; मैं अभी आता हूँ।" यह कह कर कमल भी उसी ओर चल पड़ा।

थोड़ी दूर पर कमल का पिता एक झाड़ी के पास गड्ढा खोद रहा था। उसी झाड़ी के दूसरी ओर कमल भी एक गड्ढा खोदने लग गया।

थोड़ी देर में कुछ आहट पाकर किसान रुक गया। जिधर से आहट आ रही थी, उधर जाकर उसने देखा। "अरे कमल, तुम यहाँ गड्ढा क्यों खोद रहे हो ?" अपने बेटे को वहाँ देख कर उसने अपने दाँतों तले अंगुली दबा ली।

"जिस काम के लिए आप खोद रहे हैं, मैं भी उसी काम के लिए यह गड्ढा खोद रहा हूँ।" कमल के इस उत्तर ने पिता को जैसे झक झोर दिया।

पिता ने साहस करके बेटे से पूछा— "क्या तुम्हें मालूम है कि मैं क्यों यह गड्ढा खोद रहा हूँ ?"

"मुझे मालूम तो नहीं है लेकिन किसी कार्य के लिए ही ऐसा कर रहे होंगे। आप का अनुसरण करने में क्या कोई दोष है ?" कमल के भोलेपन नें उसके हृदय को छू दिया।

वह अपने बेटे से कुछ छिपा न सका। उसने कहा— "मैं अपने पिता को दफ़नाने के लिए यह गड्ढा खोद रहा हूँ। उनके मरने पर उनके

अन्तिम संस्कार की जिम्मेदारी मुझ पर है, क्योंकि मैं उनका पुत्र हूँ ।''

''लेकिन दादा तो अभी जीवित हैं !'' कमल ने जैसे पिता का षड्यंत्र ताड़ लिया हो।

''क्षणभंगुर जीवन का क्या भरोसा ! वे किसी समय अपनी दम तोड़ सकते हैं। वे बहुत वृद्ध भी हो चुके हैं।'' पिता ने पुत्र को समझाने की कोशिश की ।

''जीवन तो किसी का भी शाश्वत नहीं है। इसीलिए मैं भी अपने पिता के लिए यह क़ब्र खोद रहा हूँ। क्यों कि पुत्र होने के नाते उन्हें दफ़नाने की जिम्मेदारी मेरी है।'' कमल उसी भोलेपन में यह सब भी कह गया ।

उसके पिता को लगा जैसे वह आसमान से धम्म्-से नीचे गिर गया हो। बेटे ने जैसे उसकी आँख की पट्टी खोल दी। उसे अब समझ में आया कि वह कितना नीच कर्म करने जा रहा था । लज्जा से वह गड़ गया ।

किसान अपने पिता और पुत्र के साथ घर लौट आया ।

किसान की पत्नी उस दिन बहुत प्रसन्न थी और विशेष भोजन तथा मिष्टान्न बना कर अपने पति की प्रतीक्षा कर रही थी ।

लेकिन गाड़ी में ससुर को देख कर उसकी सारी प्रसन्नता निराशा में बदल गई ।

किसान ने अपनी पत्नी को कमल के गाड़ी में साथ जाने तथा अपने पिता के लिए गड्ढा खोदने का सारा समाचार सुना दिया ।

उसकी पत्नी को काटो तो खून नहीं । वह अपने बेटे की हरक़त पर सिर पीटती हुई बोली— ''हाय भगवान ? कैसा युग आ गया ! हम बेटे को कितना लाड़-प्यार से पालते हैं, लेकिन वह अपने जीवित पिता के लिए ही क़ब्र खोदता है। ऐसे बेटे का तो मुँह देखना भी पाप है ।''

''लेकिन मैं भी तो वही काम करने जा रहा था। क्या उन्होंने मुझे बचपन में लाड़-प्यार से नहीं पाला ?'' किसान ने पत्नी की ओर एक विशेष प्रयोजन से देखा ।

उसके बाद पत्नी ने किसान को अपने बूढ़े ससुर के प्रति कोई शिकायत नहीं की ।
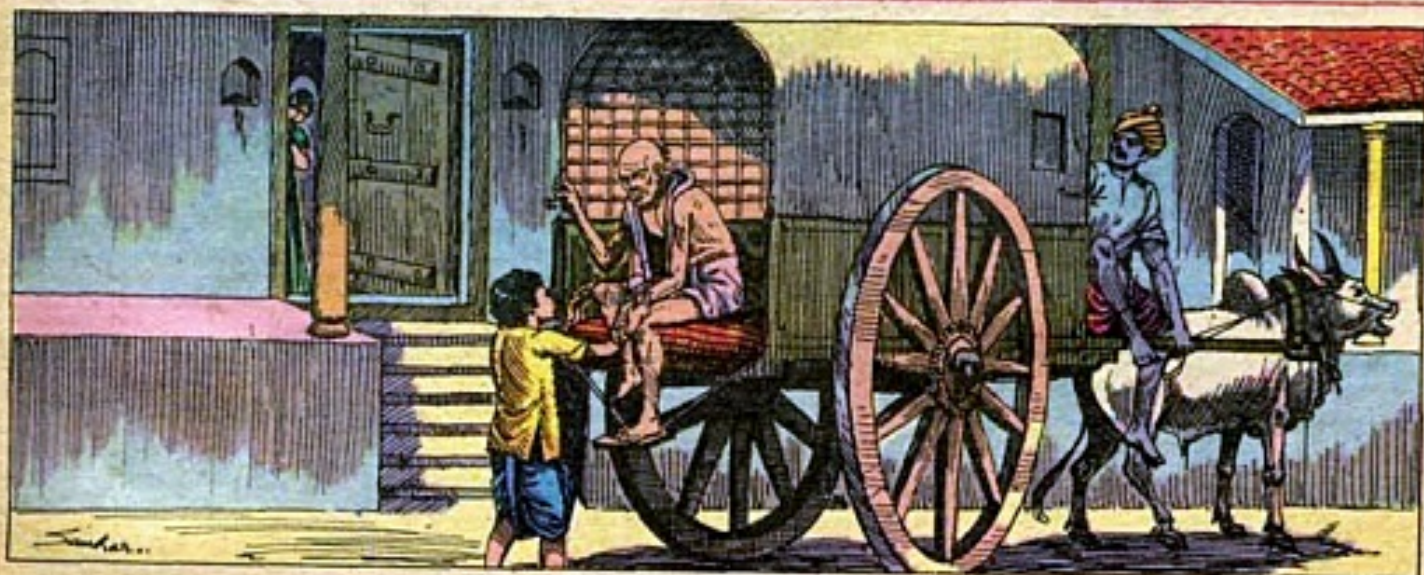
सिपाही-विद्रोह

ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने नये प्रदेशों को जीतने तथा जीते हुए राज्यों की रक्षा करने के लिए अपनी सेना में भारतीयों को भी बहाल किया। लेकिन भारतीयों का वेतन और भत्ता ब्रिटिश सिपाहियों से कम था। इन्हें कई तरह से अपमानित भी किया जाता। मसलन, जब ब्रिटिश सिपाही घोड़े पर सवार होकर जाता तब भारतीय सिपाही उसका सामान लेकर पीछे-पीछे दौड़ता।

कम्पनी के सैनिकों को कारतूसों को प्रयोग में लाने के लिए दाँतों से दबाना पड़ता था। उन कारतूसों में जानवरों की चर्बी मली जाती थी। जब सैनिकों को यह मालूम हुआ तो उनके धार्मिक विश्वासों को ठेस लगी। और वे अंगरेजों के विरुद्ध भड़क उठे।

भारतीय सिपाहियों ने आपस में विचार-विमर्श किया और १० मई १८५७ को मेरठ छावनी के भारतीय सैनिकों ने अपने ब्रिटिश अधिकारियों के विरुद्ध अचानक विद्रोह कर दिया तथा उन्हें बन्दी बना लिया।

इसके बाद वे सैनिक दिल्ली की ओर रवाना हो गये। उन्होंने रास्ते में पड़ने वाले शिविरों में भी यह समाचार सुनाया। वहाँ के सैनिक पहले से ही असन्तुष्ट थे। इसलिए यह विद्रोह दावानल की तरह सब जगह फैल गया।

दिल्ली पहुँच कर भारतीय सैनिकों ने लाल क़िले पर क़ब्ज़ा कर लिया और बहादुर शाह जफर को अपना बादशाह घोषित कर दिया। दिल्ली की ब्रिटिश सेना हार गई। दिल्ली पर भारतीय सैनिकों का क़ब्ज़ा हो गया।

उधर बित्तूर में बाजी राव द्वितीय के दत्तक पुत्र नाना साहेब को कम्पनी ने राज्य के वारिस के रूप में स्वीकार नहीं किया। फिर भी, वीर और साहसी तात्या टोपे ने नाना साहेब का राज्याभिषेक कर दिया। इसके बाद कम्पनी के विरुद्ध भारतीय सैनिकों के विद्रोह में शामिल हो गये।

झाँसी के राजा के दत्तक पुत्र को भी अंगरेज़ों ने वारिस मानने से इनकार कर दिया और झाँसी पर क़ब्जा करने के लिए अपनी सेना भेज दी। झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई ने उनके विरुद्ध युद्ध में अपनी सेना का नेतृत्व स्वयं किया। युद्ध में ब्रिटिश सेना हार गई और उसके सेनाधिकारी बन्दी बना लिये गये ।
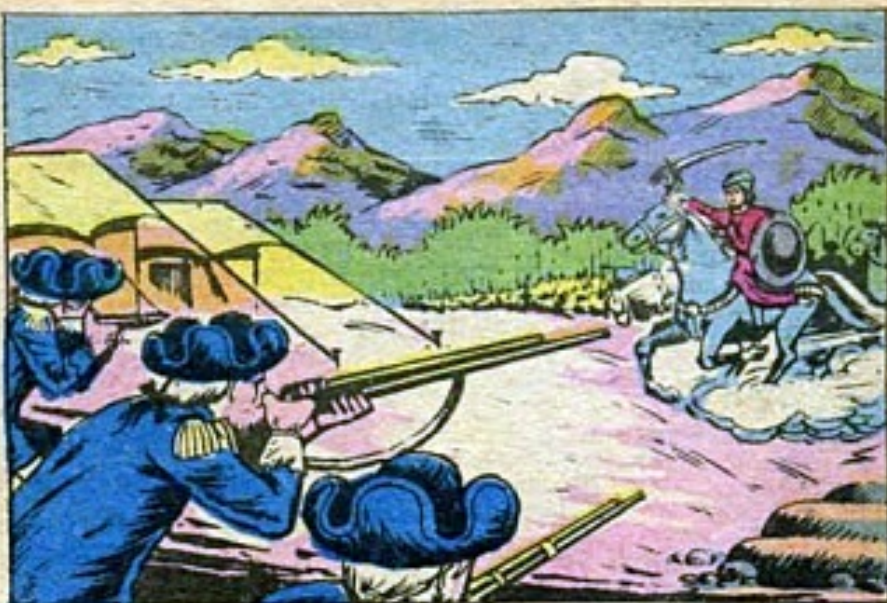
बन्दी सैनिकों के साथ रानी ने सम्मान पूर्वक व्यवहार किया । लेकिन चेतावनी दी— "हम तुम्हें अतिथि के समान रखेंगे, किन्तु तुम्हें अपने अधिकारियों को समझाना होगा कि वे हमारी परम्परा का अपमान न करें।" लेकिन तभी अचानक एक प्रसिद्ध ब्रिटिश सेनापति सर ह्यूरोज़ ने भारी सेना के साथ झाँसी को घेर लिया ।

रानी लक्ष्मी बाई ने सिंहनी की तरह ब्रिटिश सेना का मुक़ाबला किया। फिर भी, अंगरेज़ी सेना की भारी संख्या और उनके आधुनिक आयुधों के सामने क़िला सुरक्षित न रह सका । अन्त में, रानी लक्ष्मी बाई अपने पुत्र को लेकर सुरक्षित बाहर निकल गईं ।

नाना साहेब और तात्या टोपे ने झाँसी की रानी से मिल कर ग्वालियर पर चढ़ाई कर दी। ब्रिटिश समर्थक सिन्धिया क़िला छोड़ कर भाग गया। ग्वालियर और रानी की सम्मिलित सेना ने वहाँ की ब्रिटिश सेना को समूल नष्ट कर दिया।

शीघ्र ही सर ह्यूरोज भारी सेना के साथ ग्वालियर भी आ पहुँचा। वहाँ पर दो भयंकर युद्ध हुए। रानी को बच कर भागना पड़ा। अंगरेज़ों ने उसका पीछा किया। मार्ग में कई स्थानों पर कई बार दोनों में मुठभेड़ हुई। किन्तु रानी को अंगरेज़ बन्दी न बना सके, यद्यपि वह लड़ते-लड़ते बुरी तरह घायल हो चुकी थी।

अन्त में घायल रानी ने १७ जून १८५८ को एक उद्यान में अपने प्राण त्याग दिये। इनकी मृत्यु का समाचार पाकर शत्रु के सैनिक वहाँ आ पहुँचे, किन्तु इसके पूर्व ही रानी की सहेलियों और साथियों ने उनका अन्तिम दाह-संस्कार कर दिया था। झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई विश्व-इतिहास में एक उदात्त चरित्र तथा वीरांगना के रूप में अमर हो गईं।

परदा हट गया

उदयगिरि मारवाड़ राज्य का एक प्रमुख नगर था। पुरन्दर राजा के प्रतिनिधि के रूप में वहाँ का प्रशासन देख रहा था। नगर के कानून तथा व्यवस्था से राजा बहुत प्रसन्न थे। एक योग्य शासक के रूप में पुरन्दर राजा का विश्वास पात्र बन चुका था।

एक दिन पुरन्दर अपने सलाहकारों से नगर के मामलों पर विचार-विमर्श कर रहा था। तभी कुछ नागरिकों ने आकर शिकायत की—

"प्रभु ! नगर में अपराध बढ़ गया है। चोर-डाकू दिनदहाड़े लूट-मार मचा रहे हैं। रात में तो नगर में चोर-डाकुओं का ही राज्य रहता है। नागरिकों का जान-माल खतरे में है। कृपया नगर की सुरक्षा का उचित प्रबन्ध करें।"

पुरन्दर नागरिकों की ये बातें सुनकर क्रोधित हो उठा। बोला— "आप लोग जानते हैं कि मेरे आने से पूर्व यहाँ कैसी अराजकता थी ! अपराधियों को पकड़ कर क़ैद में डाल दिया गया है। जगह-जगह पर सुरक्षा के कड़े इन्तजाम कर दिये गये हैं। अपराधों की संख्या बहुत कम हो चुकी है। लेकिन इतने बड़े नगर में, जहाँ हर रोज सैकड़ों-हज़ारों नये लोग आते रहते हैं, कुछ न कुछ थोड़ा-बहुत अपराध तो होता ही रहता है। आप लोग, लगता है, तिल का ताड़ बना रहे हैं।"

"नहीं प्रभु ! ऐसी बात नहीं है। इसमें सन्देह नहीं कि कुछ दिनों के लिए शान्ति स्थापित हो गई थी और अपराध लगभग खत्म हो गये थे। लेकिन कुछ दिनों से अपराधी पुनः सक्रिय हो गये हैं। वे दिन में ही बटोहियों का माल-असबाब छीन लेते हैं और दुकानदारों का सामान लूट लेते हैं। रात में सेन्ध मारना तो आम बात हो गई है।" नागरिकों ने पुनः विश्वास दिलाने का प्रयास किया।

पुरन्दर इस पर और भी क्रोधित होकर बोला— "मुझे इन बातों पर बिल्कुल विश्वास

राजेन्द्र उपाध्याय

नहीं हो रहा है। लगता है, यह मेरे विरुद्ध असन्तोष फैलाने की कोई चाल है !"

नागरिक निराश होकर उसके और क्रोधित होने के भय से वापस चले गये।

पुरन्दर का मुख्य सलाहकार नागवर्मा उसके पास बैठा हुआ था। वह शान्तिपूर्वक सब कुछ सुनता रहा। जब नागरिक चले गये तब वह पुरन्दर से बोला— "आप को शान्त होकर नागरिकों की बातों पर विचार करना चाहिये। इनकी बातों में सचाई झलकती है। यदि यह किसी का षड्यंत्र होता तो हम लोगों के सामने ये शिकायत करने नहीं आते।"

"अभी पिछले दिनों कानून और व्यवस्था स्थापित करने में हम लोगों को जो सफलता मिली, उससे हमारे अधिकारियों में उदासीनता आ जाना स्वाभाविक है। इस उदासीनता से अपराधी लाभ उठा सकते हैं। इसलिए हमें सफलता की भ्रान्ति में अपनी आँखें बन्द नहीं रखनी चाहियें। हमें इस मामले की छानबीन करनी चाहिये।"

पुरन्दर को अपनी सफलता पर गर्व था, इसलिए नागवर्मा की बातों का उस पर कोई प्रभाव नहीं हुआ। उल्टा उससे भी उसी गुस्से में बोला— "भ्रान्ति में मैं नहीं, बल्कि ये सब हैं। मैं बिना किसी आधार या प्रमाण के किसी सन्देह में विश्वास नहीं करता।"

नागवर्मा चुप रह गया।

एक सप्ताह बाद पुरन्दर को एक नगर सेठ ने रात्रि भोज पर निमंत्रित किया। भोज आधी रात तक चलता रहा। स्वादिष्ट भोजन होने के कारण पुरन्दर ने अधिक खा लिया था। इसलिए वह पैदल ही अपनी कोठी के लिए चल पड़ा। पालकी और कहार वापस भेज दिये गये। पुरन्दर के साथ नागवर्मा और मुख्य टहलुआ भी पैदल चल रहे थे।

पथ सुनसान था और आस-पास गहरा अन्धेरा छाया हुआ था। वे कुछ दूर आगे जाकर जैसे ही मोड़ पर पहुँचे कि चार नक़ाबपोश आदमियों ने पुरन्दर पर हमला कर दिया। दोनों पक्षों में कुछ देर तक मुठभेड़ होने के बाद चोर भाग गये। लेकिन पुरन्दर को शीघ्र ही पता चला कि उसके गले का क़ीमती हार गायब है।

पुरन्दर ने नागवर्मा और अपने सेवक को चोरों का पीछा करने के लिए कहा और स्वयं भी उस दिशा की ओर दौड़ पड़ा जिधर चोर भाग कर गये थे ।

पुरन्दर अभी थोड़ी ही दूर गया था कि बगल की गली से भय से काँपता हुआ एक व्यक्ति आ रहा था । उसके गले में एक रत्नहार चमक रहा था । पुरन्दर तथा इसके दोनों साथियों को देख कर वह डर से वहीं खड़ा हो गया ।

पुरन्दर ने क्रोध में गरज कर उससे कहा— "पहले वह रत्नहार इधर लाओ ।" वह व्यक्ति अपना रत्नहार पुरन्दर को देकर तेजी से भाग गया ।

नागवर्मा ने यह सब देख कर पुरन्दर से कहा— "श्रीमान् । आप तो इस नगर के न्याय-रक्षक हैं । यदि आप ही किसी को डरा-धमका कर उसका रत्नहार ले सकते हैं तो न्याय की रक्षा कौन करेगा ? यदि यह बात नगर में फैल जाये तो आप की मर्यादा धूल में मिल जायेगी ।"

"क्यों ? चोर से अपना हार वापस लेने में अन्याय की क्या बात है ? जिस चोर की हम तलाश कर रहे थे, सौभाग्य से वह मेरे सामने आ गया ।" पुरन्दर ने अपनी बात स्पष्ट की ।

"लेकिन आज तो आप अपना रत्नहार पहन कर आये नहीं । उसके कुछ रत्न निकल आये थे जिन्हें फिर से बिठाने के लिए आपने मेरे सामने ही आज स्वर्णकार को दिया था ।" नागवर्मा ने याद दिलाते हुए कहा ।

सेवक ने भी पुरन्दर को याद दिलाया ।

वास्तव में इसी सेवक ने स्वर्णकार को कोठी पर बुलाया था तथा इसीने अपने हाथ से उसे रत्नहार दिया था। इसलिए वह भी अपने स्वामी का यह व्यवहार देख कर हैरान था।

पुरन्दर यह याद कर चौंक पड़ा और आश्चर्य करने लगा कि वह व्यक्ति कौन था और उसने अपना रत्नहार उसे क्यों दे दिया।

नागवर्मा ने इस रहस्य को स्पष्ट करते हुए कहा— "वास्तव में, श्रीमान ! वह व्यक्ति नगर का कोई भद्रपुरुष था। वह नगर में सर्वत्र फैले चोरों के आतंक से काँप रहा था। उसने हम लोगों को चोर समझ कर ही डर से अपना रत्नहार दे दिया और प्राणरक्षा के लिए शीघ्र ही यहाँ से सरपट भागा।"

नागवर्मा ने इस बात को और स्पष्ट करते हुए कहा— "चोरों के हमले से आप के मन में यह भ्रान्ति पैदा हो गई कि आप का हार खो गया है और चारों ओर चोरों का जाल फैला हुआ है। नगर में चोरों का आतंक इतना है कि हर व्यक्ति एक-दूसरे को शक की दृष्टि से देखता है। इसीलिए आपने भी एक भद्र पुरुष को चोर समझ लिया। चोरों के आतकं से जब आप की मानसिक अवस्था इतनी बिगड़ सकती है तब आम लोगों की हालत कैसी होगी, यह तो आप सहज अनुमान कर सकते हैं !"

नागवर्मा की बातें सुन कर पुरन्दर की आँखों पर का परदा हट गया। उसने अनुभव किया कि नागरिक कितनी परेशानी में आकर शिकायतें लेकर आये थे, किन्तु उसने ध्यान न देकर उल्टा उन्हें डाँट कर भगा दिया। उसकी यह भ्रान्ति दूर हो गई कि नगर में शान्ति और व्यवस्था कायम है और नागरिक चैन से हैं।

पुरन्दर ने दूसरे दिन ढिंढोरा पिटवाकर उस भद्र पुरुष को रत्नहार वापस कर दिया। उसने कानून की रक्षा के लिए सख्त कदम उठाये और अपने अधिकारियों को सदा सतर्क और सावधान रहने का आदेश दिया।

नगर में कुछ ही दिनों में शान्ति और सुरक्षा पुनः स्थापित हो गई। पुरन्दर एक बार फिर योग्य शासक के रूप में प्रसिद्ध हो गया।

शैतानी की सज़ा

नटवर बचपन में बड़ा नटखट था-जैसा नाम वैसा काम ! वह किसी के साथ भी शैतानी करने से बाज न आता । यदि उसकी शैतानी उसके अपने हमजोलियों तक ही सीमित रहती, तब भी चलो, कोई बात नहीं । मूक प्राणी तक उसके निर्मम नटखटपन से परेशान रहते ।

दुर्भाग्य से एक दिन एक दुबले-पतले और मासूम पिल्ले का नटवर से पाला पड़ गया । वह भूख से सूख कर काँटा बन गया था । उसकी हड्डी-पसली दिखाई देने लगी । गली के अन्य पिल्लों के साथ रोटी के लिए मुक़ाबला करना अब उसके बस की बात नहीं रही । इसलिए नटवर के पिता तरस खाकर उसके लिए हर रोज़ एक-दो रोटी डाल देते । नटवर तभी उस पिल्ले के साथ चुहलबाजी शुरू कर देता ।

जैसे ही भूख से व्याकुल पिल्ला खाना शुरू करता, नटवर उसके भोजन के पात्र को किसी ऊँची जगह पर रख देता । इस पर वह अनाथ की तरह कुईं -कुईं करके छटपटा कर रह जाता । कुछ देर के बाद नटवर उसके भोजन को फिर उसके सामने रख देता । पिल्ला इस उपकार के लिए कृतज्ञ हो पूँछ हिलाने लगता ।

कभी-कभी नटवर पिल्ले को किसी पेड़ की डाल पर रख देता । पिल्ला डर के मारे जब कुईं -कुईं करता तब नटवर तालियाँ बजा कर खुशी से नाचने लगता । उसके पिता उसकी ऐसी हरकतों पर बहुत डाँटते-फटकारते, लेकिन फिर भी उसकी शैतानी नहीं जाती ।

धीरे-धीरे नटवर बड़ा हो गया । नटखट और शैतान होने के कारण वह अधिक शिक्षा नहीं प्राप्त कर सका । कुछ वर्षों से लगातार वर्षा नहीं होने के कारण उसके गाँव में अकाल पड़ गया । गरीबी और चिन्ता के कारण उसके बूढ़े पिता ने खाट पकड़ ली और कुछ ही दिनों में वे स्वर्ग सिधार गये । अकेला नटवर अपनी जीविका के लिए शहर चला गया ।

गीता अग्रवाल

भाग्य से शहर पहुँचते ही एक सेठ के घर में उसे नौकरी मिल गई । भोजन के अतिरिक्त पच्चीस रुपये मासिक अलग ।

सेठ जी बड़े सज्जन और धार्मिक विचार के व्यक्ति थे । वे नौकरों के प्रति बहुत उदार थे ।

शेखर सेठ जी का दस साल का एक बेटा था । वह नटवर को अक्सर कहानियाँ सुनाने के लिए तंग किया करता । शेखर को कहानियाँ सुनाने में नटवर का अपना काम छूट जाता । इसके लिए सेठजी से उसे गालियाँ खानी पड़तीं ।

सेठ जी ने सोचा कि नटवर जान-बूझ कर काम छोड़ देता है । इसलिए एक दिन उसने उसे डाँटते हुए कहा, "लगता है, अब तुम्हें काम में मन नहीं लगता । यदि कुछ दिनों तक और यही हाल रहा तो तुम्हें यहाँ से जाना पड़ेगा ।"

नौकरी से हट जाने के डर से नटवर ने सच्ची बात बता दी । सेठ जी ने इस पर शेखर को बुलाकर खूब डाँटा ।

उस दिन से शेखर गुस्से में आकर नटवर को और भी तंग करने लगा ।

जाड़ों के दिन थे । दाँत कटकटाने वाली जोरों की सर्दी पड़ रही थी । शेखर एक दिन सुबह-सुबह कुछ गरम कपड़े लेकर नटवर के पास आया और बोला— "ऐसी सर्दी में इन गरम कपड़ों में बड़ा सुख मिलता है । यदि तुम पुराने कपड़े उतार दो तो मैं ये कपड़े तुम्हें दे दूँगा ।"

गरम कपड़ों के लालच में नटवर ने अपने पुराने कपड़े उतार दिये और एक अंगोछा पहन कर खड़ा हो गया । वह मन ही मन सोच रहा था— "शेखर बाबू कितने दयालु हैं ।"

लेकिन यह क्या ? शेखर ने अपने कुत्ते को पुकारा और नटवर पर झपटने का इशारा किया । "तुम शीघ्र ही यहाँ से दुम दबा कर भागो, वरना यह कुत्ता तुम्हें नोच लेगा ।" शेखर ने नटवर को चेतावनी दी ।

नटवर सर्दी से अधिक कुत्ते के डर से काँपने लगा । शेखर के इस व्यवहार पर वह दुख करे या आश्चर्य-यह सोचने का समय न था । कुत्ते की दहाड़ सुनते ही वह सर पर पाँव रख कर

भागा। वह आगे-आगे और कुत्ता पीछे-पीछे। वह घर के आगे-पीछे दौड़ता रहा और कुत्ता उसका पीछा करता रहा। शेखर कुत्ते को ललकारता जाता और तालियाँ बजा कर हसेता। उधर नटवर दौड़ते-दौड़ते हाँफ कर जैसे रोने लगा।

शेखर ने तब कुत्ते को बुला कर नटवर को कपड़े देते हुए कहा— "अब तुम्हें काफी गरमी लग रही होगी। ये लो ठण्ढे कपड़े पहन लो।"

ये कपड़े सचमुच में गीले थे, इसलिए बर्फ़ की तरह ठण्ढे लग रहे थे। नटवर ने उन्हें वहीं छोड़ दिया और अपने पुराने ही कपड़े पहन लिये। उसे शेखर के क्रूर मज़ाक पर क्रोध भी आ रहा था। इसलिए उसकी शिकायत करने के लिए वह तुरंत सेठ जी के पास पहुँचा।

उस समय एक और नौकर शेखर की शिकायत कर रहा था। सेठ उसकी शिकायतें सुन कर उसें समझा रहा था— "शेखर यदि काम के समय तुम्हें छेड़ता अथवा तंग करता है तब तो मैं उसे छोड़ूँगा नहीं। लेकिन बाकी समय में यदि तुम्हारे साथ थोड़ी-बहुत छेड़ खानी करता है, तो इसके लिए शिकायत की क्या जरूरत है! आखिर वह बच्चा है और बच्चे तो नटखट होते ही हैं। इसलिए बात-बात पर उसकी शिकायत लेकर मेरे पास आया न करो। मेरे पास इतना वक्त नहीं है। समझे।"

सेठ जी की यह बात सुनकर नटवर चुपचाप वापस लौट आया।

यों सेठ जी के घर में कई नौकर थे। लेकिन शेखर सबसे अधिक नटवर को ही तंग करता था। इससे सभी नौकरों को आश्चर्य होता और वे इस पर तरस भी खाते।

एक दिन एक नौकर ने शेखर को एक पिल्ला लाकर दे दिया। "अब शेखर तुम्हें तंग नहीं करेगा। उसे खेलने के लिए मैंने इसीलिए एक पिल्ला लाकर दे दिया है।" उसने नटवर से कहा।

नटवर को अपने मित्र की सूझ-बूझ पर बड़ा आश्चर्य हुआ। इस भलाई के लिए उसने उस के प्रति कृतज्ञता प्रकट की।

लेकिन पिल्ले का नाम आते ही उसके मानस-पटल पर बचपन की सारी शैतानियाँ

सजीव हो उठीं। अब उसे अनुभव हुआ कि एक की शैतानी दूसरे के लिए कितनी बड़ी यातना बन जाती है। उसे लगा कि अब वह अपने बचपन की शैतानियों की सजा भोग रहा है। भगवान का यह कैसा सुन्दर न्याय है—जैसा करो, वैसा भरो।

तभी उसे शेखर के पिल्ले की याद आ गई। जब शेखर मेरे प्रति इतना बेरहम हो सकता है तो मासूम और बेज़बान पिल्ले को पता नहीं कितना परेशान करेगा। अतः वह शेखर से पिल्ला लेकर स्वयं उसकी देखभाल करेगा और बचपन के बुरे कर्मों का प्रायश्चित करेगा।

वह तुरन्त शेखर के पास पहुँचा। शेखर उस समय अपने शिकारी कुत्ते के साथ मिल कर पिल्ले को छेड़ रहा था। पिल्ला कुईं-कुईं करके चिल्ला रहा था।

यह देख नटवर का हृदय पिल्ले के प्रति ममता से भर गया। उसे अब मालूम हुआ कि बचपन में वह कितना दुष्ट और निर्मम था। उसने शेखर को डाँटा— "यदि तुम्हें औरों को सताने में इतना ही मज़ा आता है तो मुझे सता लो-बेचारे बेज़बान और मासूम प्राणियों को क्यों इतनी बेरहमी से तंग करते हो। इसे छोड़ दो।"

"नहीं छोड़ता। तुम बीच में क्यों पड़ते हो ? चलो हटो यहाँ से।" शेखर ने पिल्ले को कस कर पकड़ लिया।

नटवर ने पिल्ले को उसके हाथ से छुड़ाने की कोशिश की लेकिन शेखर ने उसे नहीं छोड़ा। नटवर से न रहा गया। उसने शेखर के गाल पर एक तमाचा जड़ दिया और उससे पिल्ले को छुड़ा कर घर पहुँचा।

"नौकर की यह मजाल ! मेरे बेटे के ऊपर उसने हाथ उठाया !" यह खबर सुन कर सेठ की आँखें लाल हो गईं। उसने तुरन्त नटवर को बुलवा कर इसका कारण पूछा।

नटवर शान्त और निर्भय खड़ा था। उसने बड़ी निडरता के साथ उत्तर दिया— "मालिक ! शेखर इस मासूम पिल्ले को बहुत बेरहमी से तंग कर रहा था। इसने हमें भी बहुत बेरहमी से तंग किया है, फिर भी मैंने उसे कुछ नहीं कहा और न आप से शिकायत की। लेकिन पिल्ले के साथ इसकी कठोरता और

क्रूरता देखी न गई और मुझे क्रोध आ गया।" यह कहते हुए उसकी आँखों में आँसू छलक आये। उसने अपने बचपर की शैतानी की घटनाएं सुनाते हुए कहा— "मैं अपनी शैतानियों की सज़ा बहुत भुगत चुका हूँ। अब उससे बचने के लिए इस पिल्ले की रक्षा करके इसे प्यार से पालना चाहता हूँ, तभी शायद मेरे जीवन में कुछ सुख और शान्ति आये।"

नटवर की बातों से सेठ बहुत प्रभावित हुआ। उसने नटवर को सौ मोहरें पुरस्कार स्वरूप देते हुए कहा— "ठीक है, इस पिल्ले को अपने पास रख कर पालो। यदि शेखर तुम्हें फिर तंग करे तो मुझे फौरन बताओ।"

सेठ जी ने शेखर को डाँटा-धमकाया नहीं बल्कि अपने बेटे को तमाचा मारने के बदले उसे पुरस्कार भी दिया। सेठ जी का यह व्यवहार उनकी पत्नी को बड़ा विचित्र लगा। उन्होंने सेठ जी से कहा— "आप तो नौकरों के सामने अपने बेटे को भी कुछ नहीं समझते। अपने बेटे को अपमानित करने के बदले नौकर को उल्टा इनाम दे दिया। इसमें कैसा न्याय है।"

"है, इसमें बहुत बड़ा न्याय है।" सेठ जी ने बड़ी शान्ति से उत्तर दिया। "नटवर अपने बचपन में शेखर के समान ही शैतान था। अब वह अपनी शैतानियों की सज़ा भोग रहा है। शेखर को भी बड़ा होकर ऐसी ही मुसीबतें झेलनी पड़ेंगी। नटवर ने न केवल शेखर से पिल्ले की रक्षा की है, बल्कि हमारे बेटे को भी आने वाली मुसीबतों से बचा लिया है। मैंने इस पुण्य कार्य के लिए ही उसे पुरस्कार दिया है।"

पिल्ले को स्नेहपूर्वक पालने के बाद नटवर के जीवन में बड़ा भारी परिवर्तन आया। उस वर्ष उसके गाँव में भारी वर्षा हुई। वह अपने गाँव को लौट गया और उसके खेत में बहुत अच्छी फसल हुई। उसके स्वभाव से प्रभावित होकर उसके पड़ोसी गाँव के एक धनी किसान ने अपनी एकलौती बेटी से उसका विवाह कर दिया। तब से पशु-पक्षियों के प्रति उसका स्नेह और भी बढ़ गया। वह सुख पूर्वक अपना जीवन बिताने लगा।

सेर को सवा सेर

गोविन्द पुर में रग्घू साव नाम का एक बनियां रहता था । वह गल्ले की दुकानदारी के साथ-साथ सूद पर पैसे भी लगाता और हेराफेरी से लोगों से बहुत पैसे ऐंठता था । जब उसे यह विश्वास हो जाता कि वह किसी से दो के दस ऐंठ सकता है, तभी वह उसे कर्ज़ देता । अन्यथा कोई लाख उसके सामने सिर पटके, उसे फूटी कौड़ी तक उधार न देता ।

राम प्रसाद उसी के गाँव का एक गरीब किसान था । गरीबी के कारण वह बराबर ही किसी न किसी से कर्ज़ लेता रहता । रग्घू साव के पास जाकर उसने कहा— "रग्घू भाई, बड़ी मुसीबत में पड़ गया हूँ । ब्याज चाहे जितना ले लो, लेकिन हफ़्ते भर के लिए पच्चीस रुपये उधार दे दो ।"

रग्घू बड़ा काइयाँ था । वह जानता था कि राम प्रसाद की हालत बराबर खस्ता रहती है । इससे, ब्याज तो दूर रहा, मूल भी मिलना मुश्किल था । लेकिन साथ ही उसे नाराज़ भी नहीं करना चाहता था । इसलिए उसने राम प्रसाद से कहा—

"तुम तो आज पहली बार उधार माँग रहे हो, लेकिन होनी बात; तुम्हारी क़सम ! आज मेरा हाथ बिल्कुल खाली है, नहीं तो तुम्हें खाली हाथ न लौटाता ।"

राम प्रसाद को इस बात का बहुत दुख हुआ कि रग्घू ने उस पर पच्चीस रुपये का भी विश्वास नहीं किया । धीरे-धीरे उसका दुख क्रोध में बदल गया और उसने निश्चय किया कि किसी भी तरह उससे रुपया वसूल कर रहेंगे । उसे कैसे मूर्ख बना कर रुपया वसूल करें, इसी पर वह रात-दिन चलते-फिरते, उठते-बैठते विचार करने लगा । अन्त में उसे एक उपाय सूझ ही गया ।

एक दिन रग्घू साव अपनी दुकान पर

पच्चीस वर्ष पूर्व चन्दामामा में प्रकाशित कहानी

अकेला बैठा हुआ था। तभी रामप्रसाद दौड़ा हुआ उसके पास आया। उसने रग्घू साव के बहुत क़रीब जाकर पूछा— "रग्घू भाई, जरा बताना कि पाँच दस कितने होते हैं ?" रग्घू ने सोचा कि यह अंकों का गुना-भाग नहीं कर सकता इसीलिए पूछ रहा है। इसलिए उसने हिसाब लगा कर कहा— "पचास।"

"तुम्हारी अक्ल घास चरने गई है क्या ? पचास नहीं साठ होगा।" रामप्रसाद ने थोड़ी ऊँची आवाज़ में कहा।

"तुम भी निपट मूर्ख हो। साठ नहीं पचास होगा।" रग्घू ने भी चिल्लाते हुए कहा।

पचास-साठ, पचास-साठ कह कर दोनों इस प्रकार चिल्लाने लगे मानों दोनों झगड़ रहे हों। दोनों को झगड़ते समझ कर वहाँ पर कुछ लोग एकत्र हो गये।

भीड़ को सम्बोधित करते हुए तभी राम प्रसाद ने ज़ोर-ज़ोर से चीखते हुए कहा— "भाइयो! मेरा न्याय कर दीजिए। यह शरीफ़ बना हुआ रग्घू साव मेरे दस रुपये हड़पना चाहता है। मैंने इसके पास साठ रुपये जमा किये थे लेकिन यह पचास ही बता रहा है। आप लोग न्याय करके मेरे पूरे रुपये वापस दिलवा दीजिए।"

राम प्रसाद का यह बदला हुआ रूप देख कर रग्घू साव हका-बका रह गया मानों काटो तो खून नहीं। वह आँखें दिखाते हुए बोला— "अरे कैसा दुष्ट और बेईमान निकला यह राम प्रसाद! भला कब तुमने मेरे पास पैसे जमा कराये ?" फिर लोगों से उसने कहा—

''भाइयो ! यह सरासर झूठ बोल रहा है। इसने कभी भी मेरे पास रुपये जमा नहीं कराये।''

तभी राम्म प्रसाद ने उसकी बात को काटते हुए कहा— ''अपना नाटक बन्द करो रग्घू साव जी ! कौन नहीं जानता कि तुम इसी प्रकार लोगों के पैसे हड़प कर मालदार बने हो। अभी तो पचास बता रहे थे और अब वह भी गटक नारायण कर गये। कम से कम पचास तो दे दो। तुमने मुझे अच्छा सबक़ सिखाया है। अब मैं भूल से भी तुम्हारे पास पैसे जमा नहीं कराऊँगा।''

रामप्रसाद ने यह सब इस प्रकार कहा जैसे उसने सचमुच पैसे जमा कराये हों। सब को इसकी बातों पर विश्वास हो गया।

इसलिए वहाँ एकत्र हुए सभी लोगों ने रग्घू साव को डाँटते हुए कहा— ''पहले तो तुम पचास देने को तैयार थे। यह हम लोगों ने अपने कानों से सुना है। फिर हम लोगों के सामने ही तुमने यह भी इनकार कर दिया। यह तो सरासर बेईमानी है कि इसके सारे पैसे हड़प लेना चाहते हो। अब तो राम प्रसाद पचास पर भी राजी है। इसलिए चुपचाप पचास रुपये वापस कर दो।''

कुछ देर और विवाद चलता रहा तो साठ रुपये भी देने पड़ेंगे। यह सोच कर रग्घू साव घबरा गया और झट पचास रुपये निकाल कर राम प्रसाद के हाथ में रख दिये।

हाथ में रुपये आते ही राम प्रसाद ठठा कर हँस पड़ा और भीड़ के सामने ही उसे पच्चीस रुपये वापस करते हुए कहा— ''यह चाल मैंने तुम्हें सबक़ सिखाने के लिए चली थी। यह लो पच्चीस रुपये वापस और शेष पच्चीस रुपये क़र्ज़ के रूप में रख रहा हूँ। मुझे पैसों की सख़्त जरूरत थी लेकिन फिर भी तुमने मुझे टाल दिया। पैसे रख कर जरूरतमन्द लोगों की मदद नहीं की तो ऐसे पैसे का लाभ ही क्या है !

''मैं चाहूँ तो ये सारे पैसे रख सकता हूँ लेकिन मैं गरीब जरूर हूँ मगर बेईमान नहीं।''

रग्घू साव ने लज्जित हो अपना सिर नीचे कर लिया। लोग रामप्रसाद की हरकत पर मुस्कुराते हुए वापस चले गये।

विष्णु पुराण

श्री कृष्ण ने अर्जुन के रथ को युद्ध भूमि में ले जाकर दोनों सेनाओं के बीच खड़ा कर दिया ।

अर्जुन ने शत्रु सेना पर नज़र दौड़ाई । उससे लड़ने के लिए उसके दादा, पिता तुल्य गुरु जन, आचार्य तथा बन्धु-मित्रगण सभी तैयार खड़े थे । उन्हें देख कर अर्जुन का मन शिथिल हो गया— "क्या राज्य के लिए अपने प्रिय जनों का ही वध करना होगा ? नहीं, नहीं ! इनके खून से सना हुआ राज्य लेकर मैं नरक का भागी नहीं बनना चाहता । मुझे ऐसा राज्य नहीं चाहिए । मैं ऐसे राज्य के लिए कभी युद्ध नहीं करूँगा ।"

वे शिथिल होकर रथ के पिछले भाग में लुढ़क गये । हाथ से धनुष और तूणीर गिर पड़े । उनका मन शोक के अथाह सागर में डूब गया ।

श्री कृष्ण ने अर्जुन का यह हाल देख कर उन को समझाया— "हे अर्जुन ! युद्ध क्षेत्र में विवेक खो कर अस्त्र-शस्त्र त्याग देना क्षत्रिय के लिए अधर्म है । देश और काल के अनुसार अपने कर्त्तव्य का पालन ही सबसे बड़ा धर्म है ।

"वास्तव में परमेश्वर ही एक मात्र कर्त्ता है । मनुष्य केवल निमित्त मात्र है । अधर्म और अन्याय को मिटा कर सत्य और न्याय की स्थापना करने में नर नारायण के हाथ में साधन मात्र है ।

"जब-जब संसार में दुष्ट लोग बढ़ जाते हैं और सत्य तथा धर्म की हानि होती है, तब-तब दुष्टों को नष्ट करके सत्य और धर्म की स्थापना

१९. भगवद्गीता

करने के लिए हर युग में नारायण अवतार लिया करते हैं। उसी अवतार के रूप में मेरा स्मरण करके मेरी शरण में आ जाओ और मेरे आदेश का पालन करो। तुम अपना कर्तव्य करो तथा उस का फल मुझ पर छोड़ दो। एक सच्चे क्षत्रिय की तरह अपने कर्त्तव्य का पालन करो। और अपना गाण्डीव उठाकर युद्ध के लिए फिर से तैयार हो जाओ।"

इस उपदेश के बाद भी अर्जुन का यह सन्देह बना रहा कि श्री कृष्ण नारायण के अवतार हैं। तब श्री कृष्ण ने अर्जुन के संदेह को दूर करने के लिए अपने विराट रूप के दर्शन कराये।

श्री कृष्ण के विराट रूप में अर्जुन ने ब्रह्माण्ड की सृष्टि, स्थिति और प्रलय तीनों को एक साथ देखा। कर्त्ता, कर्म और क्रिया तीनों में उसी प्रभु की लीला नज़र आई। सब कुछ लय कर देने वाला महाकाल भी उसी विराट रूप का एक अंश था।

इस विराट रूप को देख कर अर्जुन का मन शान्त हो गया। उनकी शंका का निवारण हो गया। उनकी सारी चिन्ताएं दूर हो गईं। मन में केवल एक ही भाव रह गया— "श्री कृष्ण ही मेरा संचालन कर रहे हैं, मैं केवल उनका यंत्र मात्र हूँ।"

इस भाव के साथ ही अर्जुन के अंग-अंग में स्फूर्ति आ गई। वे उत्साह के साथ उठ खड़े हुए तथा गाण्डीव और तूणीर धारण करके उन्होंने अपना शंख बजाया।

फिर दोनों ओर की सेनाएं भूखे सिंहों की भाँति एक दूसरे पर टूट पड़ीं। अठारह दिनों तक घोर संग्राम चलता रहा। युद्ध में पाण्डवों की विजय हुई।

शान्ति-दूत के रूप में श्री कृष्ण ने जो भविष्य वाणी की थी वह सत्य प्रमाणित हुई। भीम ने अपनी प्रतिज्ञा पूरी की। द्रौपदी के खुले केशों में फिर से जूड़ा बँध गया।

अभिमन्यु के रूप में कालनेमि ने वीर गति प्राप्त की। कर्ण के भीतर से सहस्र कवच का अंश निकल कर शिव के अन्दर समा गया। अर्जुन और कृष्ण के रूप में नर-नारायण का अवतार पूरा हो गया। विष्णु ने, भूदेवी को दिये

गये वचन के अनुसार पृथ्वी पर से पाप का बोझ खत्म कर दिया ।

धृतराष्ट्र का हृदय दुर्योधन की मृत्यु से शोक और आक्रोश से भर गया । इस पर उन्होंने अपने बेटे की हत्या का बदला लेने के लिए भीम से मिलने की इच्छा प्रकट की । श्री कृष्ण ने उनके मन की बात जान कर लोहे की बनी भीम की प्रतिमा उनके सामने कर दी । धृतराष्ट्र ने उसे अपने आलिंगन में लेकर चूर-चूर कर दिया ।

गान्धारी ने पुत्र-शोक में व्याकुल होकर श्री कृष्ण को शाप दे दिया— "हे कृष्ण, कौरवों की भाँति तुम्हारे यादव-वंश का भी सर्वनाश हो जायेगा ।"

श्री कृष्ण ने मुस्कुराते हुए कहा— "गान्धारी ! तुम महा सती हो । तुम्हारे वचन कभी मिथ्या नहीं जायेंगे । नियति का निर्णय ही तुम्हारे मुख से प्रकट हुआ है ।"

द्रौपदी के सोये हुए पाँचों पुत्रों को द्रोणाचार्य के पुत्र अश्वत्थामा ने मार दिया था, इसलिए द्रौपदी की इच्छा के अनुसार अर्जुन और श्री कृष्ण ने उसे पकड़ कर द्रौपदी के सामने कर दिया ।

द्रौपदी ने यह कह कर अश्वात्थामा को छोड़ दिया— "शाश्वत नारकीय जीवन ही तुम्हारे लिए उचित दण्ड है । मृत्यु तो तुम्हें पीड़ा से मुक्त कर देगी ।"

श्री कृष्ण के कहने पर अर्जुन ने अश्वत्थामा के सिर से मणि निकाल कर उसे छोड़ दिया । मणि के निकलते ही अश्वत्थामा मानसिक रोग से पीड़ित होकर पागलों की तरह इधर-उधर भटकने लगा ।

अश्वत्थामा ने पाण्डव वंश को निर्मूल करने के लिए उत्तरा के गर्भस्थित शिशु पर भी अस्त्र का प्रयोग किया था । अस्त्र के प्रभाव से मृत शिशु पैदा हुआ । श्री कृष्ण ने अपने पाँव से दबा कर उस बालक के प्राण की परीक्षा ली और उसे नया जीवन प्रदान किया । इसीलिए बालक का नाम परीक्षित रखा गया । इसी बालक ने आगे चल कर पाण्डवों का वंश चलाया ।

शर-शैय्या पर लेटे भीष्म पितामह इच्छा

मृत्यु के लिए उत्तरायण की प्रतीक्षा कर रहे थे। उन्होंने मुत्यु-शैय्या से ही युधिष्ठिर को राजधर्म का उपदेश दिया। उत्तरायण आते ही देह त्याग कर वे वसुओं में जा मिले।

युधिष्ठिर का राज्याभिषेक हुआ। साथ ही अश्वमेध यज्ञ की तैयारियाँ भी शुरू हो गईं।

जब श्री कृष्ण तथा अन्य प्रमुख यादव वीर इधर युद्ध के लिए आ गये थे, तब नेतृत्व के अभाव में द्वारका में यदुवंशी उद्दण्ड, स्वेच्छाचारी और घमण्डी हो गये थे। बलराम युद्ध प्रारम्भ होने के पहले ही द्वारका से निकल कर तीर्थाटन पर चले गये थे।

एक दिन द्वारका में विश्वामित्र मुनि आये हुए थे। मूर्ख और उद्दण्ड यदुवंशियों ने सांब को गर्भवती स्त्री का वेश पहना दिया और विश्वामित्र के पास ले जाकर मज़ाक से पूछा— "कहिये महाराज! इस स्त्री के गर्भ से पुत्र होगा या पुत्री?"

विश्वामित्र ने इस मज़ाक से कुपित होकर शाप दे दिया— "मूर्ख और दुष्ट यदुवंशियो! इसके गर्भ से एक मूसल पैदा होगा जो सभी यदुवंशियों को निर्मूल कर देगा।"

उद्दण्ड और घमण्डी यादव उसके बाद भी ऋषि का उपहास करते रहे। जब सांब ने नारी वेश हटाया तब सचमुच उसमें से एक मूसल निकला। यह देख कर यदुवंशी सब डर गये।

कुछ दिनों के बाद युद्ध समाप्त होने पर श्री कृष्ण हस्तिनापुर से द्वारका लौटे। तब यादवों ने उन्हें इस घटना से अवगत कराया। श्री कृष्ण ने मूसल के छोटे-छोटे टुकड़े बना कर उन्हें समुद्र में फेंक देने के लिए कहा।

उसका एक टुकड़ा एक मछली निगल गई। वह मछली एक व्याध के हाथ लगी। मछली के पेट से उस लोहे के टुकड़े को निकाल कर उसने अपने तीर की नोक पर लगा लिया। कालान्तर में उसी तीर से श्री कृष्ण का प्राणान्त हुआ।

अन्य टुकड़े लहरों के साथ बह कर किनारे पर एकत्र हो गये और कंटीले कुश घास के रूप में उग आये।

कुछ वर्षों के बाद। एक दिन द्वारका के सभी यादव आमोद-प्रमोद के लिए समुद्र किनारे पहुँचे। वे सब के सब मदिरा पान करके

अपना विवेक खो बैठे । नशे में वे अपनी-अपनी बहादुरी की डींग मारने लगे और आपस में मार-काट करने लगे। पास में और कुछ न पाकर कुश की झाड़ियों से ही एक-दूसरे पर प्रहार करने लगे और लड़ते-लड़ते वहीं ढेर हो गये ।

इस प्रकार ऋषि का शाप सत्य सिद्ध हुआ। उस मूसल ने ही सारे यदुवंशियों का सर्वनाश कर दिया ।

जब बलराम को इस दुखद घटना का पता चला तब वे विरक्त हो जंगल में जाकर समाधिस्थ हो गये । उन्होंने योग द्वारा अपना शरीर त्याग दिया और शेष नाग के रूप में बैकुण्ठ पहुँच गये ।

श्री कृष्ण ने द्वारका बसाने के लिए समुद्र से भूमि माँगी थी । उसे सात दिनों में समुद्र को वापस करना था। इसलिए श्री कृष्ण ने अर्जुन को यह सन्देश भेजा— "तुम शीघ्र स्वयं आकर द्वारका के बच्चों, बूढ़ों और स्त्रियों को अपने साथ इन्द्रप्रस्थ ले जाओ ।"

श्री कृष्ण ने तत्पश्चात अपने प्रिय सखा उद्धव को परम तत्व का उपदेश दिया तथा उन्हें अपने वास्तविक रूप के दर्शन कराये ।

यादवों के अन्त के साथ ही अवतार के रूप में श्री कृष्ण का कार्य सम्पन्न हो गया ।

अन्त में श्री कृष्ण ने समुद्र तट पर जाकर दिव्य वेणुगान किया। उनकी मुरली के स्वर से हिन्दोल, यमुना-कल्याणी तथा देव गान्धार राग निकले। समस्त प्रकृति पुलकित हो उठी। समुद्र का जल शान्त हो गया । इसके बाद पेड़ की ओट में एक शिला पर श्री कृष्ण ने विश्राम की मुद्रा में अपने पाँव पसारे। एक व्याध ने दूर से श्री कृष्ण को देख कर उन्हें हिरन समझ लिया और उन पर बाण छोड़ दिया। बाण श्री कृष्ण के तलवे में लगा। यह वही बाण था जिसकी नोक पर मछली के पेट से निकले मूसल का टुकड़ा लगा था। इस तरह श्री कृष्ण का भी अन्त उसी मूसल से हुआ जिसने सभी यादवों का संहार किया ।

एक बार भ्रमण करते हुए द्वारका में दुर्वासा ऋषि आये थे । उन्होंने श्री कृष्ण से खाने के लिए खीर माँगी। फ़िर क्रोध में आकर उन्हें खीर

को अपने शरीर में लपेटने के लिए कहा। श्री कृष्ण ने अपना तलवा छोड़ कर शरीर के बाकी हर हिस्से में खीर लपेट ली थी। तब दुर्वासा ने श्री कृष्ण से कहा था कि केवल तलवे से ही तुम्हारे प्राणों को खतरा हो सकता है। शरीर का बाकी हिस्सा दुर्वासा के वरदान से बज्र बन चुका था।

तलवे में बाण लगते ही खून की धारा बह निकली। थोड़ी देर बाद शिकारी अपना शिकार लेने के लिए निकट आया। श्रीकृष्ण को पीड़ा से कराहते देख वह भी फूट-फूट कर रोने और पछताने लगा।

श्री कृष्ण ने व्याध को समझाते हुए कहा—"तुम मेरे लिए दुख न करो। रामावतार में मैंने पेड़ की ओट लेकर बालि को मारा था। तुम उस समय बालि के पुत्र अंगद थे। तुमने इस जन्म में मेरे उसी पाप का बदला लिया है। कर्म का फल अनिवार्य है। इसके लिए चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं है।" यह कह कर श्री कृष्ण ने शिकारी को अपने रामावतार के स्वरूप का दर्शन कराया। राम के दर्शन होते ही शिकारी को अपने पूर्व जन्म का स्मरण हो आया। वह राम की भक्ति में तन्मय हो गया और उसी तन्मयता में वह अपना शरीर त्याग कर श्री राम मय हो गया।

तभी श्री कृष्ण का सारथी उनकी खोज करता हुआ वहाँ आ पहुँचा और श्री कृष्ण को उस स्थिति में देख कर बिलख-बिलख कर रोने लगा। श्री कृष्ण ने उसे सत्वना देते हुए कहा—"तुम तुरन्त द्वारका जाकर यादवों को कहो कि वे नगर को अविलम्ब खाली कर दें। अर्जुन को यह संवाद भेज दो कि वह यादव वंश की सभी स्त्रियों को अपने साथ ले जाये। उद्धव और अक्रूर को मेरा स्नेह और आशीर्वाद दो।"

उनका सारथी आँखों में आँसू और भारी हृदय लिए वहाँ से चल पड़ा।

श्री कृष्ण ने एक बार फिर मुरली का स्वर छेड़ा। वह एक अद्भुत और अपूर्व राग था। इसके बाद उन्होंने दैहिक लीला समाप्त कर दी और विष्णु के दिव्य रूप में बैकुण्ठ की शेष-शैय्या पर आ गये।

श्री कृष्ण के देह त्यागते ही सागर का जल
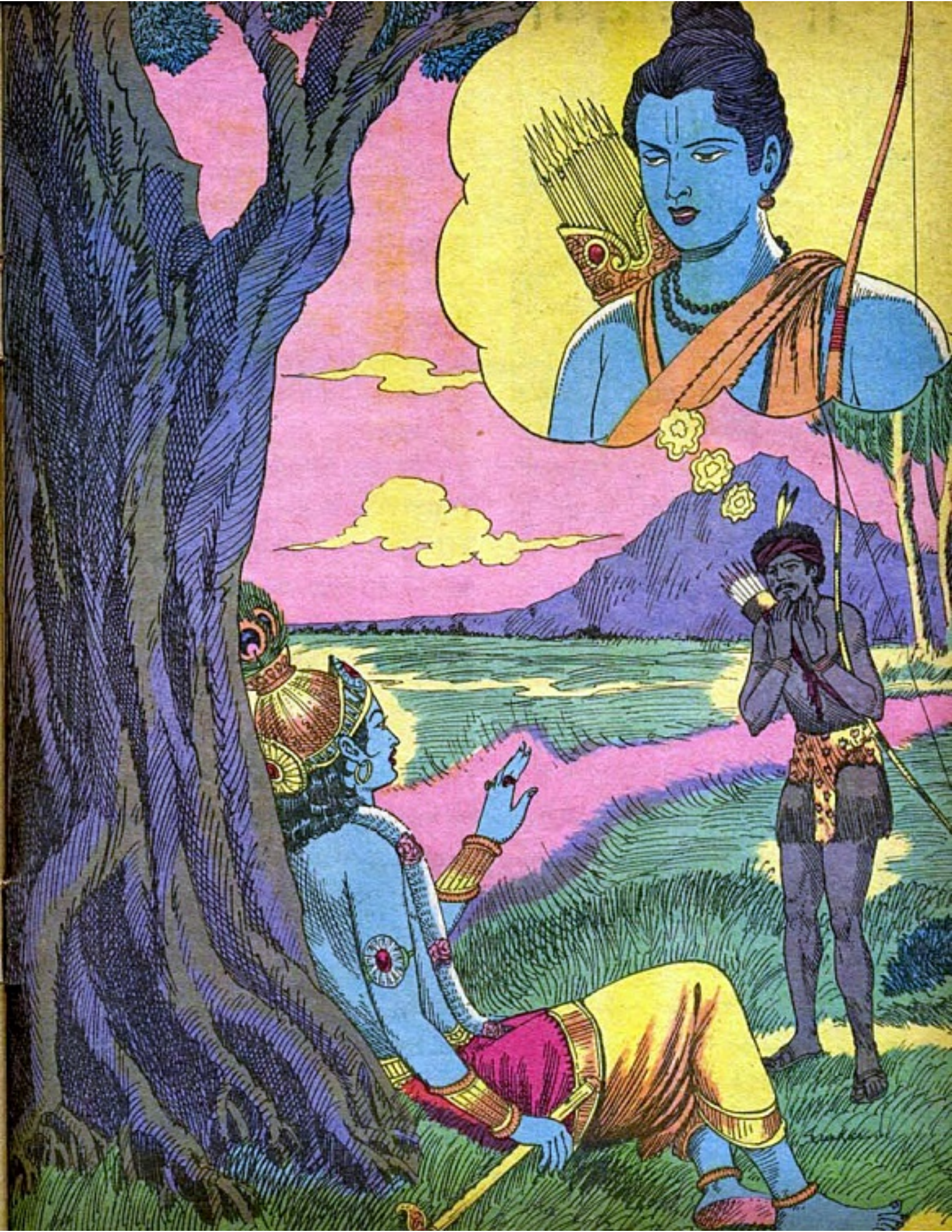
उमड़ पड़ा और द्वारका का सारा भूखण्ड जलमग्न हो गया ।

इसके बाद ही एक नया युग प्रारम्भ हुआ—कलियुग ।

श्री कृष्ण के स्वर्ग चले जाने के बाद उद्धव ने उनके आदेशानुसार जन-जन में कृष्ण भक्ति का प्रचार किया ।

श्री कृष्ण मनुष्य के रूप में विष्णु के अवतार थे और अपनी लीला द्वारा लोगों में ईश्वर-भक्ति का संचार करने आये थे । वे अपने विष्णु अंश के प्रति सदा सजग थे, इसीलिए वे त्रिकालदर्शी तथा सर्वज्ञ थे । उनके अवतार का प्रयोजन, दुष्टों का संहार करके सदाचारण करने वालों की रक्षा करना तो था ही, साथ में, एक नये आदर्श की स्थापना करना भी था । उन्होंने ऊँचे विचारों को आचरण में लाकर हमारे सामने एक शालीन राजतंत्र का आदर्श रखा ।

वे मानव रूपधारी होते हुए भी मानव की सीमाओं से परे थे । वे मानवीय कामनाओं और उसके बन्धनों से मुक्त थे । उन्होंने जो भी कर्म किया या लीलाएं कीं, वे सब निष्काम थीं । उनमें इनकी कामना या फल की लालसा नहीं थी । इसीलिए वे लीला-पुरुष थे ।

उनके जाने के बाद ही कलियुग का प्रवेश हो गया । वे जानते थे कि कलियुग में पाप का प्रभाव इतना बढ़ जायेगा कि मनुष्य में तपस्या की शक्ति क्षीण हो जायेगी । इसीलिए मनुष्य की मुक्ति के लिए सरल साधन के रूप में वे भक्ति का बीज बो गये ।

कृष्णावतार की एक महान भेंट के रूप में गीता निस्सन्देह कलियुग के महा सागर में डूबती मनुष्यता के लिए एक मात्र नौका का काम करेगी । इस महान ग्रन्थ में स्वयं प्रभु के मुख से निकले अमृत वचन समस्त वेद-वेदान्तों के सार तत्व हैं ।

गीता की महानता के बारे में किसी विद्वान ने ठीक ही कहा है-वेद-वेदान्त गौएं हैं । श्री कृष्ण दोग्धा यानी उन गौओं को दुहनेवाले हैं । अर्जुन बछड़ा है जो गीता रूपी अमृत का पान कर रहा है ।

सुलतान की चेतावनी

"वस्त्रा के राज महल में चोरी"— यह खबर देखते-देखते जंगल की आग की तरह पूरे नगर में फैल गई ।

सुलतान क्रोध से काँप रहे थे और अधिकारी भय से ।

सुलतान को बेशक़ीमती हीरे-जवाहिरातों तथा वज्र खचित मूठ वाली अपनी प्रिय तलवार के चले जाने का रंज इतना न था, जितना कि महल में चोरी की घटना से ।

वे आँखें लाल करके कह रहे थे— "इसका यह मतलब है कि अधिकारी अन्धे हैं, सुलतान नालायक़ है । यदि चोर महल में बेरोक-टोक आ जा सकते हैं तो नगर का हाल क्या होगा ?"

उन्होंने सुरक्षा अधिकारियों को बुला कर डाँटा— "याद रखो, यदि दो-तीन घण्टों के अन्दर माल सहित चोरों को मेरे सामने हाज़िर नहीं किया तो तुम सब को फाँसी पर लटका दिया जायेगा ।

"मुझे मालूम है, तुम लोग चोरों को पकड़ने का क्या ढंग अपनाते हो ! मेहनत से बचने के लिए किसी आवारा या भिखारी को पकड़ लाते हो और उसी को चोर बता कर वाह वाही ले लेते हो । इसीलिए कहता हूँ कि माल के साथ चोर को पकड़ना होगा, नहीं तो तुम्हारी जान की खै़र नहीं ।"

सभी रक्षा अधिकारी इस चेतावनी से डर गये । जान की परवाह किसे नहीं होती ! इसलिए सबने मिल कर यह निश्चय किया कि किसी न किसी तरह असली चोर को पकड़ कर रहेंगे ।

प्रधान सुरक्षा अधिकारी ने अपने सभी सहायकों को बुला कर उन्हें आवश्यक निर्देश दिये और वेश बदल कर नगर की सभी दिशाओं में फैल जाने को कहा ।

"शाम को दक्षिण दिशा में स्थित शराब

अरब्य रजनी की कहानी

खाने के पास सब लोग मिलो।" यह उसका अन्तिम निर्देश था।

रहमत खाँ नामक एक अधिकारी ने भिखारी का रूप बना लिया। वह नगर की उत्तरी दिशा में दोपहर तक चोरों की टोह लेता रहा। वह भटकते-भटकते काफी थक गया था और उसे जोरों से प्यास लग रही थी।

वहाँ पर एक उद्यान था, जिसमें स्वच्छ जल का एक तालाब था। रहमत खाँ तालाब के पास जाकर अपनी प्यास बुझाने लगा।

जब वह पानी पी रहा था तभी उद्यान के पहरेदार ने उसकी गर्दन दबोच ली। उसने उसे दो-चार लात घूंसे भी जमाये और फिर डाँटते हुए कहा— "अरे कमबख्त ! चोर की तरह यहाँ किससे पूछ कर घुस आये। आजकल नामी चोर तुम्हारी तरह भिखारी की शक्ल बना कर घूमते रहते हैं।"

रहमत खाँ यद्यपि स्वयं सुरक्षा अधिकारी था, लेकिन वह अपना भेद खोलना नहीं चाहता था। इसलिए वह लात खाकर भी खून का घूंट पीकर रह गया।

वह कराहता हुआ गिड़गिड़ाकर कहने लगा— "मैं कोई चोर-डाकू नहीं बल्कि एक अभागा भिखारी हूँ। प्यास से दम निकला जा रहा था, इसलिए दो घूँट पानी के लिए इधर चला आया। इसलिए मेहरबानी करके मुझ पर दया कीजिए और मारिये नहीं !"

"ओ, तो यह बात है !" पहरेदार ने व्यंग्य से कहा तथा फिर उस पर दो-चार लातें और जमा दीं।

सुरक्षा अधिकारी ने यह सब झेलना ही अच्छा समझा। वह उसकी लात-मार सहता रहा और अपने पर क़ाबू बनाये रखा।

लेकिन पहरेदार उसे मारता ही जा रहा था। जब रहमत से नहीं रहा गया तब उसने अपना तेवर बदल दिया।

"आखिर तुम मुझे क्यों मारे जा रहे हो? मैंने कौन-सा अपराध किया है? क्या पानी पीना या प्यास बुझाना अपराध है? और फिर तुम्हें मारने का अधिकार किसने दिया? यदि तुम मुझे चोर ही समझते हो तो मुझे सुरक्षा अधिकारियों के पास ले चलो। झूठ-सच का पता लगा कर वे ही खुद मुझे दण्ड दे सकते हैं।"

पहरेदार को इसकी बात पर और भी गुस्सा आ गया।

"तुम मुझे कानून सिखाने आये हो?" यह कह कर उसने रहमत को धक्का देकर उद्यान से बाहर कर दिया और स्वयं सीटी बजाता हुआ दूसरी ओर चला गया।

उसके बाद वह चोरों के सुराग में इधर उधर घूमने के बाद शाम को निश्चित स्थान पर पहुँचा। अन्य अधिकारी भी एक-एक करके वहाँ पहुँच गये। इसकी फटेहाल और परेशान हालत देख कर सब को बड़ा आश्चर्य हुआ।

रहमत ने जब अपनी दुख भरी कहानी सुनाई तो सब का क्रोध भड़क उठा। उन सबने पहरेदार को सबक़ सिखाना चाहा। इसलिए तुरंत कपड़े बदल कर सब के सब उद्यान की ओर चल पड़े।

उद्यान का पहरेदार एक दस वर्ष के बालक से संकेत के साथ रहस्य मय ढंग से बात कर रहा था। तब सभी अधिकारी पीछे से जाकर एक साथ ही उस पर टूट पड़े। किसी ने उछल कर उसकी गरदन दबोच ली, तो किसी ने उस पर तड़ातड़ लात-घूंसे जमाने शुरू कर दिये।

पहरेदार इस अचानक आक्रमण से घबरा उठा और समझ न सका कि बात क्या है। वहाँ पर खड़ा दस वर्ष का बालक एक साथ इतने सुरक्षा अधिकारियों द्वारा अपने मामा को बुरी तरह पिटते देख कर भय से कांपते हुए कहने लगा— "हुज़ूर ! मेरे मामा को न मारो। ये जो चोरी करके सामान लाये हैं, मैं सब आप सब को दिखा देता हूँ।"

अधिकारियों को बालक की इस बात पर बड़ा आश्चर्य हुआ और भीतर से खुशी भी हुई।

"कहाँ वे सामान हैं, जल्दी बताओ।" गरजते हुए प्रधान सुरक्षा अधिकारी ने उस बालक को भी एक तमाचा जड़ दिया।

बालक रोता हुआ अधिकारियों को उद्यान के कोने में एक झाड़ी के पास ले गया। वहाँ खोदने पर सुलतान के महल के चोरी के सारे सामान बरामद हो गये। अधिकारियों की खुशी का ठिकाना न रहा। वास्तव में यह सब रहमत की करामात थी।

रहमत ने पहरेदार को डाँटते हुए कहा— "यदि तुम आज एक प्यासे और बेक़सूर भिखारी को लात-घूंसों से न मारते तो तुम्हारी चोरी पकड़ी न जाती। लगता है किसी पिशाच ने तुममें प्रवेश कर महल में चोरी करवाई तथा उसी ने तुमसे भिखारी को मारने का कुकर्म भी करवाया।"

रहमत की ये बातें सुन कर पहरेदार ने उसे पहचान लिया और अपनी करतूत पर पछताने लगा।

अधिकारियों ने चोरी का माल और चोर दोनों को सुलतान के हवाले कर दिया। सुलतान ने रहमत को इनाम के साथ-साथ विशेष सुरक्षा अधिकारी भी बना दिया।

दो मूर्ख व्यापारी

अनूप नगर के जमीन्दार बड़े उदार स्वभाव के थे। उनके पास व्यापार करने के लिए जो भी व्यक्ति पूँजी उधार माँगने जाता, वे मना नहीं करते। किन्तु वे उस व्यक्ति की व्यापारिक बुद्धि की परीक्षा जरूर लेते। जब उन्हें विश्वास हो जाता कि यह व्यक्ति व्यापार में सफल होगा, तभी वे उसे ऋण देते।

एक दिन उनके पास ऋण के लिए दो मूर्ख व्यापारी आये। उन्होंने जमीन्दार से अनुरोध करते हुए कहा— "श्रीमान ! हम लोग मुर्गी के अण्डों का व्यापार करना चाहते हैं। इसके लिए कम से कम एक हजार रुपये की पूँजी की आवश्यकता होगी। छः महीने के बाद हम लोग यह रक़म वापस कर देंगे।"

जमीन्दार ने जानना चाहा कि अण्डे के बारे में उन दोनों का ज्ञान कितना है। इसलिए उन्होंने पूछा— "मुर्गी के अण्डे के बारे में तुम क्या नहीं जानते हो ?"

"श्रीमान ! मुझे आज तक यह समझ में नहीं आया कि अण्डे के अन्दर हवा और रोशनी के बिना चूजा कैसे रहता है ?" एक ने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा।

"लेकिन इससे भी अधिक ताज्जुब की बात तो यह है श्रीमान।" दूसरे ने आश्चर्य से आँखें फाड़ते हुए कहा— "कि चूजे को बाहर निकलने के लिए अण्डे को फोड़ना पड़ता है लेकिन बिना उसे फोड़े हुए वह अन्दर कैसे चला जाता है। यह कितना बड़ा आश्चर्य है !"

जमीन्दार यह सुन कर मुस्कुराये और फिर कुछ पल रुक कर बोले— "तुम लोग अण्डों के व्यापार में सफल नहीं हो सकते।"

यह कह कर जमीन्दार ने उन्हें बिना ऋण दिये ही वापस भेज दिया।
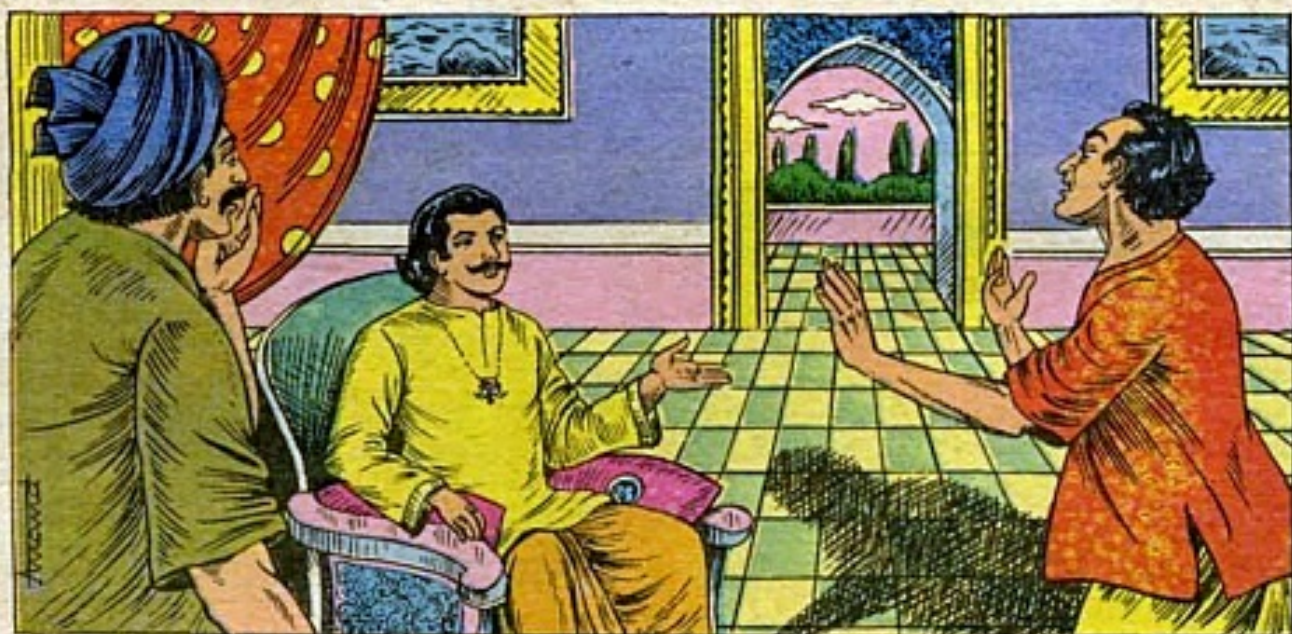
फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ अक्तूबर १९८४ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

Mrs. Manjula

H. N. Kelora

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ अगस्त १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

जून के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो: मनोरंजन की खोज!

द्वितीय फोटो: अकेलापन तो बोझ!!

प्रेषक: अमितकुमार शर्मा, C/o एस. आर. शर्मा, रवीन्द्र नगर, पो. भद्रकाली (प. बंगाल)

"क्या आप जानते हैं" के उत्तर

१. सन्त थॉमस, २. जैन धर्म, ३. नालन्दा, ४. जेन्द अवेस्ता, ५. सिसिरो.

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.
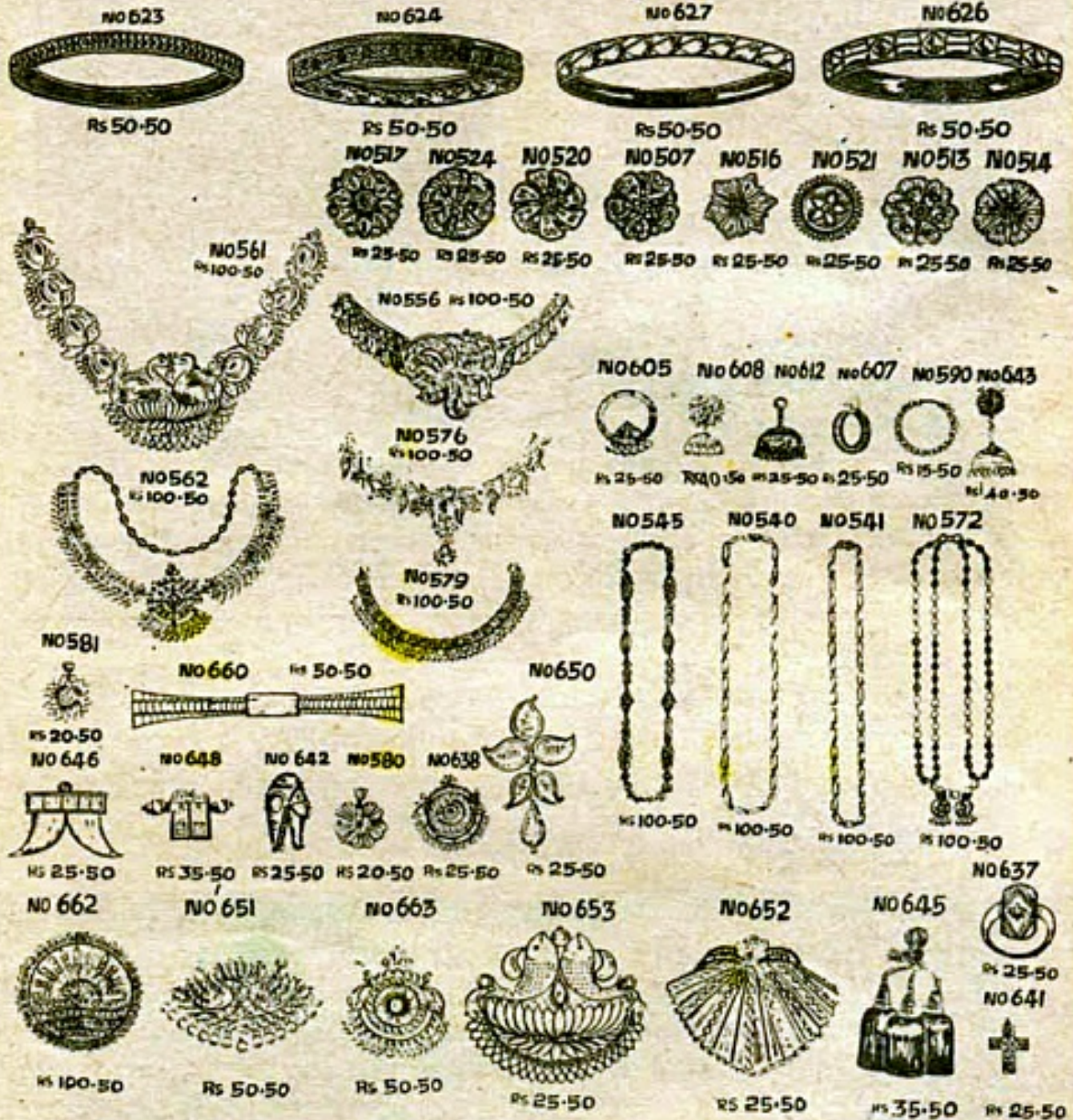
भरपूर चॉकलेट, भरपूर मौज-मज़े
एक चहेता हर एक के लिए
दूध भरा
मक्खन भरा
चॉकलेट वाला
nutrine Eclairs
न्यूट्रीन
Eclairs
चॉकलेट
कैरॅमल बाहर, चॉकलेट भीतर
मीठे-मीठे चॉकलेटं से खुश हो जाओ दुगना!
nutrine Eclairs
nutrine
भारत में सबसे ज़्यादा बिकनेवाला चॉकलेट
CLARION/NC/8340
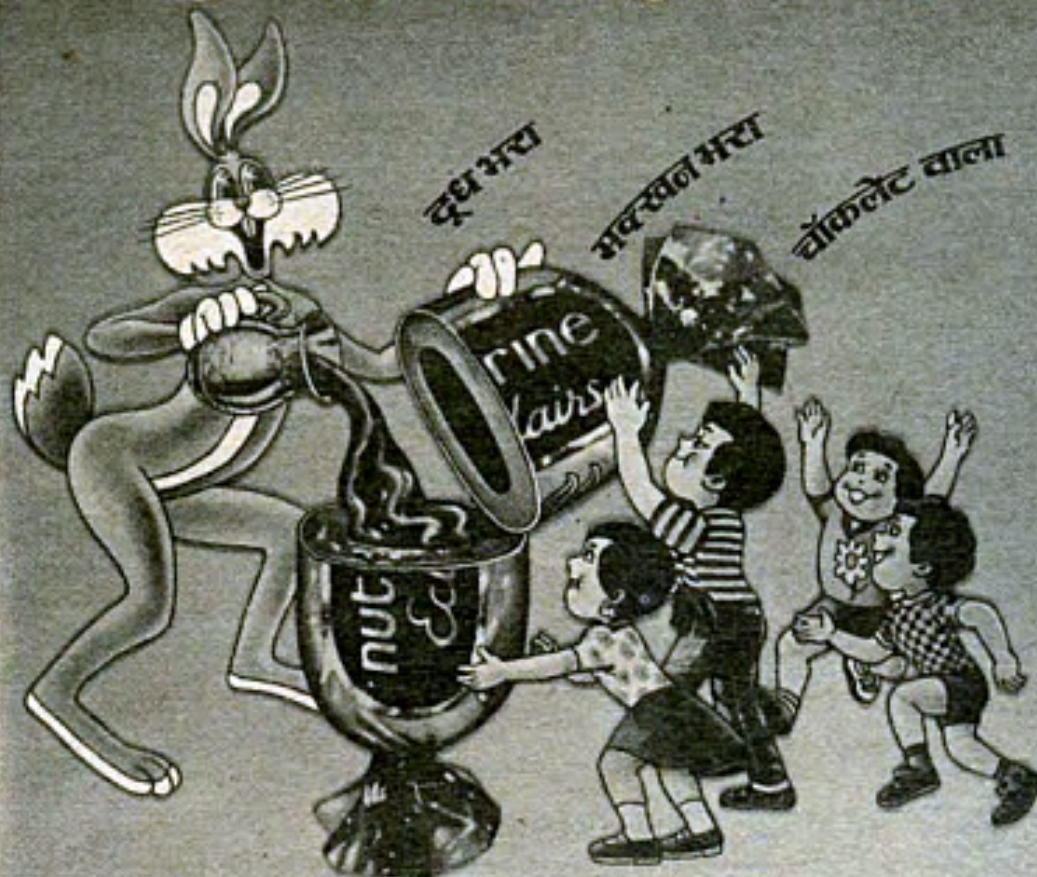
FREE!

The story of the film told in comic strips

THE OFFICIAL ADAPTATION OF THE MOVIE!

Make a thrilling movie really unforgettable!
Get your own copy of this exciting Book FREE with subscriptions to Super Comics.

It tells the story of

in 52 colourful Action packed pages.

Its a great bargain and excellent value for your money.
Hurry! Offer open only till 31st July 1984.

Subscription rates:
6 months (12 issues) — Rs.30
1 Year (24 issues) — Rs.55

Book is FREE with 6 months subscription also. Send your M.O./Postal Orders to

Dolton Agencies, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026.